...को धूप-छाँव

नवयुवक हृदय सम्राट पं० नरेन्द्रजी

ओ३म्

पं० नरेन्द्र जी स्वलिखित

जीवन—चरित्र

जीवन की धूप-छाँव

प्रकाशक

पं० प्रियदत्त शास्त्री

सितम्बर १६८१ पानीपत मूल्य ५ रु०

ओ३म्

धन्यवाद

आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण हैदराबाद के तत्त्वाधान में सन् १९७१ में मराठवाडा आर्य सम्मेलन गुंजोटी में करने का निश्चय हुआ। सम्मेलन को सफल बनाने के लिए पं० नरेन्द्र जी दो महीने पूर्व ही गुंजोटी पहुँचे हुए थे। पंडित जी की सेवा के लिए गुंजोटी के आर्यों ने मुझे कहा मैंने सहर्ष स्वीकार किया और तन मन से सेवा करने लगा। 'सेवा से मेवा मिलती है' यह कहावत मेरे लिए पूर्ण चरितार्थ हुई। उनकी सेवा से मेरे जीवन में नया मोड़ आया और आज मैं देव दयानन्द का सैनिक बन कर पुरोहित का कार्य कर रहा हूँ।

दिनांक २४—९—१९७६ के दिन मुझे ही नहीं बल्कि समस्त आर्य जगत् को बड़ा भारी धक्का लगा! पंडित जी के निधन से मैं अपने आपको अनाथ समझने लगा क्योंकि मैं उनको अपने पिता के समान मानता था। मैं जब से घर-बार छोड़ कर निकल पड़ा तब से ही मुझे पंडित जी हर प्रकार की सहायता देते रहे बल्कि घर छुड़ाने वाले वही थे। उन्हीं की कृपा से मैं आज आर्य समाज का पुरोहित हूँ। मैं पंडित जी के ऋण से अनृण कैसे हो सकता हूँ जिसने मेरे जीवन को बना दिया।

मेरे मन में सन् १९७८—७९ में ही पंडित जी का स्वलिखित जीवन चरित्र छपवाने का विचार था परन्तु किसी कारणवश छपवा न सका। इस वर्ष परमात्मा की असीम कृपा से इस जीवन-चरित्र को छपवाने में समर्थ हो सका हूँ। इस कार्य में मेरे पुज्य गुरु आचार्य सत्य-प्रिय जी एम० ए० का पूर्ण सहयोग रहा है। इन्हीं की प्रेरणा से मैं इस कार्य को पूर्ण कर सका हूँ। अत: आचार्य जी का हृदय से धन्यवाद करता हूँ।

आर्य प्रतिनिधि सभा आन्ध्र प्रदेश के मंत्री श्री पं० विजय वीर-जी विद्यालंकार, श्रीमति जय लक्ष्मी जी आर्या व श्री देवनाथ जी आर्य

ने पं० नरेन्द्र जी के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण चित्र देकर इस पुस्तक की शोभा को बढ़ाया है मैं इन सब का आभारी हूँ। प्रा० राजेन्द्र जी 'जिज्ञासु' आर्य समाज के स्तंभ हैं। इनकी रग-रग में आर्य समाज रमा हुआ है। यह स्वयं त्याग व तपस्या की मूर्ति हैं। आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध लेखक हैं। मेरे जैसे बच्चे की प्रार्थना को सहर्ष स्वीकार करके इस पुस्तक को भूमिका लिख कर पुस्तक को चार चांद लगाये हैं। अतः मैं इनका बहुत-बहुत धन्यवाद करता हूँ।

पुस्तक छपवाने में आर्य समाज माडल टाऊन पानीपत की बहनों व भाइयों का पूर्ण आर्थिक सहयोग रहा है। अतः ये सब भी धन्यवाद के पात्र हैं।

आपका

प्रिय दत्त शास्त्री

प्रियवर पं० प्रियदत्त जी शास्त्री,

सप्रेम नमस्ते

आशा है कि आप कुशल पूर्वक होंगे, आपका पत्र मिल गया पढ़कर सब वृत्त विदित हुआ।

आप स्वामी सोमानन्द जी का जीवन प्रकाशित कर रहे हैं, जानकर अत्यधिक हर्ष हुआ है, उनके तप, त्याग बलिदान तथा साधना, दक्षिण भारत के आर्य जगत् का एक गौरवशाली अंग है, मेरी दृष्टि में आर्य समाज के लोकमान्य तिलक एवं वीर सावरकर थे, जिन्होंने तिल-तिल करके अपने जीवन को होमते हुए निज़ाम साम्प्रदायिकता पूर्ण खूनी पंजे से वहां की देश भक्त जनता को मुक्त करने का ऐतिहासिक साहसिक श्रेयस्कर कार्य किया है, उनका यह जीवन आर्य जगत् की नयी पीढ़ी में स्फूर्ति तथा नवजागरण का संचार करने वाला होगा, आपने सच्चे अर्थों में उनका श्राद्ध किया है, जिसके लिये आप हार्दिक बधाई के पात्र हैं।

भवदीय

सत्यप्रिय शास्त्री एम० ए० साहित्याचार्य

प्राचार्य

दयानन्द ब्राह्ममहाविद्यालय, हिसार

ओ३म्

भूमिका

'रक्त रंजित है कहानी'

१९७५ ई० के जून मास की बात है। मैं विश्व प्रसिद्ध कहानोकार सुदर्शनजो के जीवन सम्बंधो सामग्री की खोज के लिए बम्बई जाते हुए देहली उतरा। आर्य समाज नया बांस में नर नाहर बलिदानी पं० नरेन्द्र जी मिल गये। उन्हें मेरे कार्यक्रम की पूर्व जानकारी थी। प० जी ने कहा, "मुझे भी आपसे कुछ काम है।" मैंने कहा, "आज्ञा दीजिए।" दो तीन दिन देहली रुकना था। पं० जी ने कहा, "मैंने कुछ लिखा है, आप पाण्डुलिपि देख लें और जो अदल बदल करनी हो कर लें।"

पं० जी ने 'जीवन की धूप-छांव' स्वयं पढ़कर सुनानी आरम्भ की। मैं तो वर्षों से आग्रह करता चला आ रहा था कि वह अपने संस्मरण अथवा जीवन की प्रेरणा प्रद कहानी लिखें। व्यस्तताओं में जकड़े पकड़े नरेन्द्र जी ने आर्य समाज शताब्दि वर्ष में यह पवित्र कार्य कर ही दिया। यह पुस्तक उर्दू में भी लिखी गई यह 'आर्य गज़ट' सप्ताहिक में क्रमशः प्रकाशित हो चुकी है। राष्ट्रभाषा में यह द्वितीय संस्करण प० जी के प्रिय शिष्य वा चरणानुरागी पं० प्रियदत्त जी आर्योपदेशक द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है।

यह कोई साधारण पुस्तक नहीं। यह हमारे देश के एक अजयी-विजयी स्वाधीनता सेनानी की प्रेरणाप्रद अमर कहानी है। यह एक समाज सुधारक की जीवन गाथा है। यह एक समर्पित जीवन का इतिहास है। यह दीन दुखी के प्राण त्राण का जीवन वृत्त है। यह एक लौह लेखक की आत्म कथा है। यह एक प्राणवीर की अनुप्राणित करने वाली जीवनी है। यह एक क्रान्तिवीर के चरित्र का चित्र है। अघ अज्ञान से टक्कर लेने वाले, रुढियों कुरीतियों को उखाड़ने वाले, लोकहित में बलाओं को बुला बुलाकर आलिङ्गन करने वाले, श्री पं० नरेन्द्र जी की अमर कहानी निर्जीवों में जीवन का संचार करेगी। इसके अध्ययन से

हमारे देश के नवयुवकों को सन्मार्ग दर्शन होगा।

प० नरेन्द्र जी एक स्वनिर्मित जीवन के व्यक्ति थे। वह देश जाति के लिए तिल-तिल जले और जिए। उन्होंने अपना सुख साज घर बार सब कुछ देश पर वार दिया। आश्चर्य होता है कि छोटे से कद के इस व्यक्ति ने क्रूर निज़ामी सरकार को कैसे कम्पा कर रख दिया। हमारे दलित भाइयों को धर्मभ्रष्ट करने के लिए नवाब बहादुर यारजंग ने एक षड्यन्त्र रचा। पं० नन्रेद्र जी ने इसे विफल बना दिया। तब खीज कर सटपटा कर नवाब साहेब ने कहा था "एक छोटे से कद के आदमी नरेन्द्र ने मेरे सब काम पर पानी फेर दिया है।" पं० जी की हत्या के लिए मुसलमानों को उकसाया गया परन्तु पं० लेखराम के मानस पुत्र रुकना झुकना और डरना क्या जानें ?

१९३८ ई० में पं० जी को मनानूर में स्थानबद्ध कर दिया गया। यह ऊंची पहाड़ी पर घने जंगलों में स्थित है। यहां सिंह चीते विचरते हैं। यहीं पर दक्षिण केसरी नरेन्द्र को रखा गया। सिंहों के साथ एक और सिंह आ मिला।

पं० जी ने इतिहास की धारा को बदल दिया और इतिहास को बनाया। भारतीय स्वाधीनता संग्राम और भारतीय एकीकरण के इतिहास की कहानी आपके नाम और काम की चर्चा के बिना अधूरी है। हैदराबाद के मुक्ति-आन्दोलन का रक्त रंजित इतिहास और पं० नरेन्द्र को कहानी एक ही बात है। आप हैदराबाद के गेरीबाल्डी थे। पं० नरेन्द्र के नाम मे निज़ाम राज्य के पद दलित और पदाक्रान्त युवकों के हृदयों में स्वाधीनता की चाह और आत्मोत्सर्ग की बिजलियां कौंधती थी। सिंह को सींखचों के पीछे रखकर भी कारागारों की ऊंची दीवारों के चारों ओर पुलिस के सिपाही रखने पड़ते थे निज़ाम करता भी तो क्या ? नरेन्द्र अन्दर हो तो जन विद्रोह भड़कता हैं। नरेन्द्र बाहर हो तो जन विद्रोह भड़कता है। नरेन्द्र हैदराबाद राज्य की पीड़ित जनता के दिलों को धड़कन थे। पं० जी आर्य समाज की एक आग्नेय विभूति थे।

यथा नाम तथा गुण पं० नरेन्द्र जी जैसे कर्मठ महावीरों की लोक सेवा के कारण श्रीयुत सी० वाई० चिन्तामणि ने आर्य समाज के

विषय में अत्यन्त सजीव भाषा में लिखा था. "Where there is a work to do there one does not miss the Arya samaj". अर्थात् जहां कहीं भी कोई करणीय कार्य होगा, वहां वहां आप आर्य समाज को पाएंगे।

पं० जी एक ओजस्वी वक्ता थे। उनकी वाणी निष्प्राणों में प्राण फूंकने की क्षमता रखती थी। उनके शब्दों के पीछे उनका कर्म बल, तपोबल वा आत्म बल होता था। उनकी सिंह गर्जना से निज़ाम-शाही के भव्य राजभवन में भूकम्प सा आ जाता था। वह एक सिद्ध-हस्त लेखक थे। महाशय सुदर्शनजी के साहित्य के प्रभाव से कहानीकार बनने की सनक सवार हुई पर कोई विशेष सफलता न मिलने पर मार्ग बदल लिया। उनकी 'शहीदाने हैदराबाद' पुस्तक की भूमिका लेखनी सम्राट पं० गंगा प्रसाद उपाध्याय जी ने लिखी थी। उपाध्याय जी सरीखे लेखक ने ग्रंथ व ग्रंथ लेखक की भूरि २ प्रशंसा की। यह अप्रका-शित सामग्री कहां गई ? पता नही। पं० जी एक कुशल पत्रकार थे। उनके लेखों से जन जागृति पैदा हुई। सरकार पं० जी के लेखों के कारण पत्रों का गला घोटती रही परन्तु,

भावों की भीषण ज्वाला को सीने में कौन दबा सकता।
अलबेले दृढ़ सङ्कल्पी को रास्ते से कौन हटा सकता ॥

पं० जी एक अद्वितीय प्रशासक थे। महर्षि-दीक्षा शताब्दि मथुरा के संयोजक के रुप में आपकी अद्भुत प्रबंध पटुता पर अपने बेगाने सब मुग्ध हो गये। आर्य समाज स्थापना शताब्दि दिल्ली में मनाई गई। इस महापर्व की सफलता का श्रेय लेने के लिए कोई कितनी भी डींग क्यों न मारे, इतिहास लेखकइस तथ्य का प्रकाश करेंगे कि इस विराट् सम्मेलन की सफलता का मुख्य श्रेय श्रद्धेय प० जी को ही जाता है।

वह मानव निर्माण कला के चतुर शिल्पी थे। कार्यकर्त्ताओं को खींचना, प्रशिक्षित करना और प्रोत्साहित करना.....—.....यह तो उनका सहज स्वभाव बन चुका था। जब महर्षि दयानन्द के बलिदान —...... विषपान की ऐतिहासिक घटना को झुठलाने का षड्यन्त्र रचा गया तो मैंने दिन रात एक करके पत्र पत्रिकाओं में बीसियों खोजपूर्ण लेख देकर

सत्य की रक्षा करके इतिहास को दूषित होने से बचाया। मेरे लेखों को पढ़कर पूज्य पं० जी ने बम्बई से मुझे एक भावपूर्ण पत्र में लिखा आप-की इस सेवा के लिए, आर्य समाज के इतिहास में आपका नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा जावेगा। मैंने तब उन्हें लिखा था मेरा नाम भले ही मिट्टी के अक्षरों में भी न लिखा जावे परन्तु मैं पं० लेखराम के नाम वा काम की रक्षा करुंगा। आर्य समाज के इतिहास को नष्ट भ्रष्ट करने का षड्यंत्र नहीं चलने दूंगा। साहित्यकारों के प्यारे वा पूज्य पं० नरेन्द्र जी के आत्म-चरित्र की भूमिका लिखने का अवसर देकर प्रियवर धर्मनिष्ठ प्रियदत्त ने मुझे अपने प्यार से लाद दिया है। इन्हें किन शब्दों में धन्यवाद दूं? देव दयानन्द जा के दुलारे, लौह पुरुष स्वाधीनता सेनानी स्वामी स्वतंत्रानन्द जी के प्यारे और उत्साह के अंगारे श्री पं० नरेन्द्र जी को आत्म कथा की भमिका लिखते हुए मुझे बड़े हर्ष वा गर्व की अनुभूति हो रही है। आर्य समाज व आर्य समाजेतर सब देश प्रेमियों कोघर-घर में इस जीवन दायिनी पुस्तक को पहुंचाना व पढ़ाना चाहिए। वीर सन्यासी का चरित जन 2 को उभारेगा और तारेगा।

प्रसंगवश एक बात न चाहते हुए भी लिखने पर विवश हूं कि श्री विद्यानन्द विदेह ने मरने से पूर्व एक 'आत्म स्तुति पर निन्दा पुराण' रचा। इस विदेह गाथा में गालियां हैं और सैंकड़ों झूठी कपोल कल्पित बातें लिखी हैं। पूज्य पं० नरेन्द जी के सम्बंध में अपशब्दों का प्रयोग करके श्री विध्यानन्द ने अपने घोर पतन और निर्लज्जता का ही परिचय दिया है। देश पर सर्वस्व आहूत कर देने वाले पुण्यात्मा के विषय में मिथ्या बातें लिखना कृतज्ञ जनता के लिए असह्य है।

२४ अगस्त
उपाध्याय जन्म शताब्दि वर्ष

आर्य जाति का
विनीत सेवक
राजेन्द्र 'जिज्ञासु'
वेदसदन अबोहर
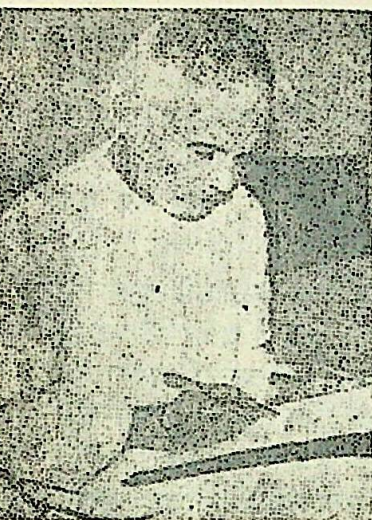
भोगे हुए को शब्दों में उतरना जूझने से कम मुश्किल काम नहीं है : स्वास्थ्य-लाभ के बाद संस्मरण लिखते हुए पं० नरेन्द्र जो

उत्तर भारत से निकल कर निज़ाम-शाही के प्रति वफ़ादारी स्वीकार करते हुए मेरे वंश के पहले बुजुर्ग हैदराबाद पहुँचे। परिवार का हर व्यक्ति सम्पन्न और शिक्षित था।

मेरे दादा राय कान्चन्द्र जो हिन्दी तथा उर्दू-फ़ारसी के विद्वान् थे। पिता जी राय केशवप्रशाद भी उर्दू-फ़ारसी के प्रति सुरुचि और विद्वत्ता रखते थे। मेरे मामा राय ठाकुर प्रसाद जी हिन्दी, उर्दू और फ़ारसी के साहित्यकार थे। उन्हें शायरी से लगाव था और उनका उपनाम "नज्म" था।

मनसब गया

मेरे परिवार के वरिष्ठ लोग निज़ाम के वफ़ादार थे, इसलिए निज़ाम ने मनसबदारी का फ़रमान जारी किया था। उस समय से, मेरे पिता जी के स्वर्गवास तक, मनसब जारी रहा। केवल इतना परिवर्तन किया गया कि मेरे बड़े भाई राय राजेन्द्र प्रसाद को मनसब का जो अर्धांश पिता जी के देहांत के बाद प्राप्त होना चाहिए था, जारी कर दिया गया। शेष आधा भाग दूसरा पुत्र होने के कारण नियमानुसार मेरे नाम होना चाहिए था। परन्तु निज़ाम मीर उस्मान अली खाँ ने एक आदेश के द्वारा मनसब को बन्द करने की आज्ञा दी। उस आदेशपत्र में लिखा हुआ था कि "तुमको मुसलसिल हिदायत देने के बावजूद हुकूमत और हुकुमराने-वक्त के ख़िलाफ़ (तुम) बेवफ़ाई बरतते रहे हो, जो वफ़ादारी निज़ामे वक्त के मुग़ायर (विरुद्ध) है।

तुम्हारे मनसब के हक़ को जब्त किया जाता है।" इस आदेश का मुझ पर कोई प्रभाव नहीं हुआ, क्योंकि मैंने पहले ही दो बातों का निश्चय कर लिया था : १. जीवन के वास्तविक उद्देश्य की खोज, २. वैवाहिक जीवन में न बँधना। इन बातों के सम्बन्ध में समझ-बूझ कर और भविष्य में होने वाली सारी घटनाओं के सम्पूर्ण परिणामों से पूरी तरह से अवगत होने के बाद ही इस निर्णय पर पहुँचा था, तो फिर मुझे दुखों, कष्टों और कठिनाइयों की कोई बाधा न थी।

मैं इस वास्तविकता से भी परिचित था कि जितनी दुर्घटनाएँ होंगी जीवन का अनुभव भी उतना ही बढ़ेगा। हर अच्छे उद्देश्य की पूर्ति के लिए काँटों से भरे मार्ग पर से हो कर चलना पड़ता है। विरोध की बड़ी-बड़ी चट्टानों से टकराना ही होगा। दुखों की धूप-छाँव से घबरा-कर जीवन-पथ से डिगना कायरता है। मन को सन्तोष देते हुए इस विचार पर मुझे विश्वास था कि अन्धकार में जिस प्रकार प्रकाश होता है उसी प्रकार कष्टों में आनन्द छिपा होता है। मन में उमंगों के उठने वाले तूफ़ान पर क़ाबू पाया। फिर एक बार निश्चय किया कि अगर मृत्यु का भी सामना करना पड़े तो अपने साहस को डिगने न दूँगा। सकल्प पानी की लकीर नहीं होता, जो हवा के झोंके से मिट जाए। बस क्या था, साहस बांधा, निश्चय दृढ़ हुआ। मैंने अपने दोनों निर्णयों पर दृढ़ता से जमे रहने का अन्तिम निश्चय करके निज़ाम के आदेश का उत्तर सर अकबर हैदरी (नवाब हैदरनवाज़ जंग) सदरे आज़म हैदराबाद को भेज दिया कि मैं मनसब के अपने अधिकार को वापस लेता हूँ। इससे पहले सदरुल मुहाम नवाब फखरयार जंग बहादुर ने मुझे बुला कर समझाया और कहा—"आप निज़ाम और उनकी सरकार की मुखालिफ़त छोड कर एक माफ़ीनामा लिख दें, तो आपके हिस्से का मनसब जारी कर दिया जाएगा।" मगर मैं इस पर बिलकुल राजी नहीं हुआ, और इनकार करके चला आया। मनसब का अधिकार त्यागने की सूचना भाई साहब को भी दे दी कि निज़ाम की इस भीख पर जीवन व्यतीत करने की अपेक्षा देश जाति और धर्म की सेवा के मार्ग पर भूखे मरने को पसन्द करूँगा, परन्तु निज़ाम सरकार को "माफ़ीनामा" लिख कर देने को प्रस्तुत नहीं हूं। ये शब्द सुन कर भाई साहब के चेहरे की आभा मन्द पड़ गयी, और वे आह भर कर बोले—"तेरी मर्जी, ईश्वर तेरा भला करे।" आशीर्वाद के इन शब्दों

का भाई साहब के मुँह से निकलना था कि मन की मुरझायी हुई कली खिल गयी मन में उमंगों की लहर और आंखों में सन्तोष की ज्योति जाग उठी।

सत्संग की खोज में

मेरे सामने अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए मार्ग की खोज का महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह था कि जीवन का पथ कैसे सँवारा जाए जिससे मेरी मनोकामना पूर्ण हो सके। उन्हीं दिनों मुझे एक पुस्तक "गरीबों का आसरा", जिसके लेखक पूना के मेहर बाबा थे, पढ़ने को मिली। इस पुस्तक में साईं बाबा (शीरडी), उपासनी बाबा (साकोरी), नारायण महाराज (कीट गाँव), ताजउद्दीन औलिया (नागपुर), और श्री बाबा जान (पूना) का वर्णन कुछ ऐसे ढंग से प्रस्तुत किया गया था कि मन पर जादू-सा प्रभाव कर गया। मेरा मन तरह-तरह से विचारों की धाराओं में वहने लगा। बाबाओं के चमत्कारों ने मुझे मोहित कर दिया।

यह घटना उस समय की है जब मेरे पिता जी प्लेग की जानलेवा बीमारी से पीड़ित थे। मैं उनकी बीमारी की परवाह न करते हुए भगवान् श्री उपासनी बाबा से आत्मिक ज्ञान प्राप्त करने हैदरावाद से पैदल ही श्रद्धा के आकर्षण में बँधा साकोरी तक पहुँच गया। यह विकट यात्रा मैंने बाईस दिनों में पूरी की। मार्ग में गाँव का हर मंदिर मेरा घर था। "दाने-दाने पर लिखा है खाने वाले का नाम" कहावत के अनुरुप हर मन्दिर के पुजारी की रोटी में मेरा हिस्सा था। चलते-चलते पैरों पर सूजन सी आ गयी थी। सर्दी का मौसम अपनी चरम सीमा पर था। तन पर वस्त्र, न पांवों में जूता— केवल मन में परमात्मा की लगन और धुन। शरीर पर सर्दी का प्रभाव पड़ चुका था। पैरों में दम न था। परन्तु दर्शन की ललक के कारण और मन में उमड़ते हुए अथाह उत्साह से पग आगे बढ़ते रहे। अन्ततः वह दिन आ ही गया, जब मैं उपासनी बावा की पवित्र धरती पर पहुँच गया। अब क्या था, ऐसा लगा जैसे नरक से निकल कर स्वर्ग पहुँच गया हूँ। सूर्य दिन भर की थकान दूर करने पश्चिमांचल में अस्त हो रहा था। कुछ प्रकाश अभी शेष था। लोगों ने मेरे

नये चेहरे को देख कर धर्मशाला में ठहरने के लिए मना कर दिया। रात बेचैनी से बीती।

अब बेड़ा पार है

सूर्योदय से पहले साढ़े चार बजे उपासनी बाबा की आरती में हर उस व्यक्ति को जो वहाँ होता बाबा के दर्शन के निमित्त जाना पड़ता था। मैं भी दर्शन के लिए चल पड़ा। आरती हुई। बाबा एक लकड़ी के बने हुए पिंजरे में रहा करते थे। सब लोगों ने बाबा के चरण स्पर्श किये और मैंने भी। यह क्रम महिने भर चलता रहा। एक दिन बाबा ने मुझ से पूछ लिया कि तुम कहाँ के रहने वाले हो? बस क्या था, 'डूबते को तिनके का सहारा' वाली कहावत चरितार्थ हुई। मैंने अपने मन की आकांक्षाओं को लम्बी कहानी सुना डाली, और निवेदन किया कि इस दरबार में उपस्थिति का कारण जीवन के उस रहस्य को मालूम करना है जो मनुष्य के जीवन का उद्देश्य है—वह कैसे प्राप्त हो सकेगा? उत्तर मिला—मन्दिर में भजन करो, बाहर से भिक्षा ला कर जीवन का निर्वाह करो। बाबा ने और भी कहा कि प्रतिदिन हमारे प्रवचन में आया करना! गुरु के दर्शन और दत्तात्रेय महाराज की कृपा से तुम जीवन में सफल हो जाओगे। इन आशीर्वचनों से तन-मन की थकान दूर हुई। आशा की किरण जीवन के अन्धकार में दिखाई देने लगी। अब बेड़ा पार है। गुरु ही सब कुछ है जैसा कि कहा गया है—"गुरुर्ब्रह्मा, गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।" इसी विश्वास पर दिन-रात प्रभुनाम स्मरण में कई मास लगा दिये। बाबा के पास से कुछ कल्याण नहीं हो पाया। प्रभु-मार्ग का यह अकिंचन, कामनाओं की खाली झोली कन्धे पर डाले, 'साईं' बाबा के स्थान शीरडी पहुँचा।

दैवी चमत्कार

साईं बाबा की समाधि के दर्शन किये और चार दिन ठहर कर नारायण महाराज के दर्शन के लिए कीटगांव चल दिया। वहां के ठाटबाट ब्राह्मणों का अब्राह्मणों के साथ भेदभाव इतना अधिक देखा कि

ठहरने को मन नहीं किया। ईश्वर भक्तों के दरबार में यह भेद-भाव और मानव-मानव के बीच घृणा का वातावरण देख कर हृदय को चोट-सी लगी। धर्मशाला में एक भक्त रहते थे, उन्होंने कहा कि ये सब संत जिनकी भक्ति करके इस स्तर पर पहुँचे हैं, तुम वहीं क्यों नहीं जाते। मैंने पूछा—'वह स्थान कौन-सा है ?' भक्त जी ने कहा, 'वह पंढरपुर है।' भक्त जी की बात का सहारा पा कर कीट गांव से पंढरपुर की बाट पकड़ी। बारह दिन की पैदल यात्रा के बाद पंढरपुर पहुँचा तो ऐसा अनुभव हुआ कि तपती धूप के बाद शीतल छाया देने वाले वृक्ष के नीचे पहुँच गया हूँ। वहाँ कई मास व्यतीत किये। वहाँ के वातावरण का परिशीलन करने से बहुत कड़ुवे अनुभव हुए, जिन्होंने मेरी आंखे खोल दी और पंढरपुर की कहानी मेरे जीवन-पथ के लिए मील का पत्थर बन गयी। मैं इस घटना को दैवी चमत्कार समझता हूँ जिसने मेरी भटकी आत्मा को शुभ मार्ग पर लगा दिया। अब मैं उन अन्धविश्वासों के अन्धेरों की उस सीमा तक पहुँच चुका था, जहाँ से मुझको आशा का प्रातःकालीन प्रकाश दिखाई देने लगा था। दिल को दहला देने वाली आश्चर्यजनक दुर्घटना का स्मरण करते ही कलेजा मुँह को आने लगता है। जब तक आंखों में आंसू रहेंगे, उस समय तक यह दुर्घटना दिल की अमानत बनी रहेगी।

एकादशी के दिन, एक विशेष रूप से महाराष्ट्र में, हर छोटा-बड़ा व्यक्ति व्रत रखता है। चन्द्रभागा नदी में धूम-धाम और भीड़-भाड़ पूर्ण भक्त मण्डलियां सबेरे से दूसरे दिन सबेरे तक भक्ति में नाचतीं और ईश्वर भजन में मस्त रहती हैं। मैं भी सारी रात भजन करता जागता रहा। आंखों से नींद खो गयी थी। 'जय विट्ठल-जय विट्ठल' की धुन में रात शीघ्रता से बीत गयी। चार बजे चन्द्रभागा नदी में स्नान किया। भक्त नामदेव जी महाराज के मन्दिर को अपनी 'डयूटी' (तीन घंटे तक हर भक्त को गले में वीणा डाले भजन करना होता है) पूरी करने चल दिया। यकायक मेरे पैर से एक रेत के ढेर को धक्का लगा। भीतर से रोने की धीमी आवाज आने लगी। मैंने समझा कोई जानवर है। सोचता-सोचता बुत बना वहीं खड़ा रह गया। एक पथिक ने पूछ ही लिया, क्या बात है ? क्यों चिंतित हो कर बुत बने खड़े हो ? मैंने कहा तुम अपना रास्ता लो। तुम्हे इस बात से क्या कि मैं यहाँ क्यों

तमाशाई बना खड़ा हूँ, मैं पागल नहीं हूँ। सुनते नहो कि इस रेत को ढेरी में से रोनें की आवाज आ रही है। कान रखते हुए भो बहरे हो। उस राहगीर ने मुझे मराठी भाषा में भरे दिल से बताया कि यह प्रतिदिन की गाथो है। भारत की सबसे अधिक विधवाएँ पंढरपुर में ही है। अभी अनाथश्रम के लोग आएँगे और इस रेत की ढेरी पर से नवजात शिशु को ले जाएँगे। मैं खड़ा का खड़ा रह गया। विचारों की झंझा से विचलित हो उठा। विचारों के ज्वार में मैं सोचने लगा था कि यह पवित्र स्थान और यह कुकर्म ! क्या यह वही धरती है जहाँ विठोबा ने पुंढरीक को आशीर्वाद दिया था ? क्या यह वहो पवित्र स्थान है, जहाँ संत तुकराम महाराज ने भक्ति से भरे गीतों से सोयी हुई मानवता को जगाया था ? ज्ञानोबा, नामदेव, सोपान, मुक्ताबाई जैसे प्रभु-भक्तों ने भक्ति और मुक्ति का प्रकाश पाया था ? अपने गीतों से जनता में क्रान्ति उत्पन्न कर दी थो ? वही गोत आज भी चन्द्रभागा की धारा और पवन को सरसराहट में प्रतिध्वनित होते हैं। क्या यह वही महाराष्ट्र है, जहाँ समर्थ राम दास जो ने राग में वैराग्य के स्वर फूँके थे !

पंढरपुर में ईश्वर की कृपा से एक धार्मिक धनवान ने हिन्दू अनाथालय की स्थापना कर रखी थी, जिसमें अनाथ बालकों का पालन पोषण किया जाता था। अनाथालय का प्रबन्ध बहुत अच्छा और प्रशंसनीय था। आश्रम का सेवक आया और उसने रेत को ऊपर से हटा कर कपड़े में लपेटे हुए बालक को बड़ी फूर्ती से अनाथालय पहुँचा दिया। मैं भी उस आश्रम के सेवक के साथ चल पड़ा। आश्रम को देखा। एक नहीं, कई बच्चे पालने में झूल रहे थे। खिले हुए पुष्प की भाँति उनके मुख खिले हुए थे। ओठों पर मुस्कान, कोई पैर पटक रहा था, तो कोई अंगूठा मुँह में लिये आनन्द मना रहा था, तो कोई रोते–रोते अपने दुर्भाग्य, विवशता और जाति के कलंक पर आँसू बहा रहा था।

पकड़े गये

मैं कई मिनटों तक बच्चों के प्यार भरे स्नेहपूर्ण संसार में खो-सा गया। मस्तिष्क में एक बोझ लिये मैं धीरे-धीरे चन्द्रभागा नदी के किनारे—किनारे चलता हुआ यह विचार करता रहा कि हिन्दू

समाज के पतन के कारणों में यह भी एक कारण होगा । पंढरपुर में विधवाओं की भारी संख्या थी, क्योंकि नौ-दस वर्ष की आयु होते ही लड़कियों का विवाह कर दिया जाता है । लड़के बड़े होने पर और शिक्षित होने पर अशिक्षित पत्नी को छोड़ देते हैं, और अधिक आयु के लोगों से उनका पुर्नविवाह होने के कारण वे लड़कियां विधवा हो जाती हैं । इस प्रकार की घटनाओं के कारण ही करोड़ों वर्षों की पुरातन और विशाल हिन्दू जाति सीमित हो कर रह गयी है । पंढरपुर के देवता जब यहाँ के लोगों का पथप्रदर्शन नही कर सके तो मेरी जीवन नय्या कैसे किनारे लगेगी ? गुनाहों की इस बस्ती में मेरा जीवन कैसे बीत सकेगा ? यह सोच कर मन उचट गया । मेरी आशाओं, आकांक्षाओं का उपवन उजड़ गया । मस्तिष्क में बिजली-सी कौंध गयी हृदयाकाश में उदित होने वाला सूर्य वहाँ के काले बादलों में छिप गया । गया सोचा था, क्या हो गया ? निराशा की स्थिति में जीवन की असफलता पर रुदन करता हुआ, दुर्भाग्य को कोसता. नामदेव महाराज के मन्दिर की ओर जा रहा था कि सामने से मेरी पूज्य माता जी और मेरे एक सम्बन्धी साहब राय जी आते दिखाई पड़े । हम दोनों की नजरें एक हो गयीं । मुझे देख कर माँ का दिल भर आया । ममता से भर कर उन्होंने मुझे अपनी बाहों में पकड़ लिया । सिर पर हाथ रख कर कहा—"जीते रहो बेटा, घर का मेरा राजा जंगल का फ़क़ीर बना फिरता है, हाल तो देखो साहब राय जी । चलो बेटा, बोलता क्यों नहीं ?" मैं चुपचाप खड़ा रहा । मेरे मन में प्रश्नों का तांता लग गया इन्हें मेरे यहाँ होने का पता कैसे चल गया ? किसने मेरे साथ धोखा किया ? अब मुझे क्या करना चाहिए ? इन सब प्रश्नों की भीड़ मेरे मस्तिष्क को परेशान किये हुए थी । अन्ततः माँ की आँखों से निकले ममता के अश्रु अपना काम कर गये । मैं माता जी और साहब राय जी के साथ मन्दिर की ओर चल दिया ।

मन में इस बात को जानने की व्याकुलता बढ़ती जा रही थी कि इन्हें मेरा पता कैसे लगा । साहब राय जी ने बताया कि हैदराबाद के प्रसिद्ध संत भटजी बापू के एक भक्त श्री शेषगिरि राव (जो मुझसे परिचित थे) ने मुझको यहाँ देखा और माता जी को तार दिया कि आपका पुत्र यहाँ है, शीघ्र आइए । यह घटना १९२८ की है । उस समय मेरी आयु अठारह वर्ष की रही होगी ।

मातृ देवो भव:

माता जी घर चलने का आग्रह कर रही थीं। मैं रात भर सोचता रहा। नींद आँखों से उड़ गयी थी। प्रातःकाल के शीतल समीर के झोंकों से निद्रा की गोद में ऐसा सो गया कि सबेरे आठ बजे ही उठ पाया। फिर प्रश्न यही प्रस्तुत हुआ कि क्या उत्तर दिया जाए। एक ओर पंढरपुर की पापपूर्ण गाथा, तो दूसरी ओर माँ की ममता! इन दोनों में से किसी एक को अपना लेने का निर्णय न कर सका। माता जी ने कहा—"बेटा! तुम्हारे पिता जी मरते-मरते बचे हैं। तुमको देखने के लिए तरस रहे हैं, और तुम मेरी दशा पर दया करो, हैदराबाद चलो। वहाँ भी ईश्वर-भक्ति हो सकती है।" माता जी की बात ने मन पर प्रभाव डाला और मैंने दो दिन के बाद पंढरपुर से माता जी के साथ हैदराबाद के लिए प्रस्थान किया।

घर के द्वार पर बहनें, भाई और पड़ोसी सब ऐसे खड़े प्रतीक्षा कर रहे थे, जैसे बारात के दूल्हे की अगवानी के लिए खड़े हों। घर के भीतर प्रवेश करते ही मुझे भीतर से आती पिता जी की आवाज सुनायी पड़ी—"बेटा! इधर आओ।" मेरा ध्यान उस ओर गया तो देखा कि पिता जी बिस्तर पर लेटे हुए हैं। बीमारी के कारण उत्पन्न कमजोरी से चलना-फिरना बन्द था। मैं चरण स्पर्श करके उनके समीप बैठ गया। घर का सारा वातावरण प्रसन्नता और आनन्द से भरपूर हो उठा था। चारों ओर से आवभगत होने लगी। दिन बीतते गये। दो महीने एकान्त और शान्त वातावरण में बीत गये।

तूफ़ान की शुरूआत

उन्हीं दिनों की बात है।

हैदराबाद राज्य में सिद्दीक़ दीनदार जन बसवेश्वर नामक व्यक्ति अपने को लिंगायत मत का अवतार बतला कर हुबली, धारबाड़, मैसूर, गुलबर्गा और रायचूर इत्यादि स्थानों के भोले-भाले ग्रामीण लिंगायत भाइयों और हिन्दुओं को मुसलमान बनाने का काम निज़ाम

सरकार की गुप्त शह पा कर आरम्भ किये हुए था। निज़ाम सरकार का धार्मिक विभाग पर्याप्त धन धर्म-परिवर्तन के निमित्त देता था। हिन्दुओं और लिंगायतों में इस घटना से खलबली मची हुई थी। उन्होंने इस विषय पर सोच-विचार आरम्भ कर दिया था। सिद्दीक दीनदार की फ़रेबकारी, चालाकी, धोखेबाजी से जनता को परिचित और सावधान किया जाए, क्योंकि निज़ाम-हैदराबाद ने यहाँ के मुसलमानों में यह श्रेष्ठता का भाव उत्पन्न कर रखा था कि तुम अल्पसख्यक हो, परन्तु शासक हो। इसलिए कि तुम्हारा शासक मुसलमान है। अपने इस विचार की पुष्टि के लिए निज़ाम ने अपनी एक ग़जल की अन्तिम पंक्तियों में लिखा था—

सलातीन सलफ़ सब हो गये नज्रे अजल "उस्मान"
मुसलमानों का तेरी सल्तनत से है निशाँ बाक़ी

हैदराबाद राज्य के शासक नवाब मीर उस्मानअली खाँ की इस्लामी धर्मान्धता का एक और उदाहरण उन्हीं के इस शेर में प्रकट होता है—

बन्द नाक़ूस हुआ सुन के नदाए-तकबीर।
ज़लज़ला आ ही गया रिश्त-ए-जुनार पे भी॥

सिद्दीक़ दीनदार ने बड़े जोर-शोर से तबलीग़ (धर्मपरिवर्तन) का काम हैदराबाद और मैसूर राज्य में फैला रखा था। उसने "सरवरे आलम" नामक पुस्तक प्रकाशित की थी, जिसमें योगेश्वर कृष्ण और हिन्दू देवताओं की निन्दा की गयी थी। इस पुस्तक के विरुद्ध आर्य समाज सुलतानबाज़ार के मन्त्री श्री चन्दूलाल ने जो उस समय आर्यसमाज के प्राण कहलाते थे, इस कार्य को अपने हाथों में ले कर हैदराबाद में हिन्दुओं के भीतर जागृति उत्पन्न कर दी थी। चन्दूलाल जो के साथ सर्वश्री बंसीलाल व्यास, मुन्नालाल मिश्र, मोहन लाल बलदवा और मोहनाचार्य को हैदराबाद की जनता कदापि नहीं भूल सकती, जिन्होंने तन, मन, धन से अपने-आप को आर्यसमाज की सेवा और प्रचार के लिए समर्पित कर रखा था। इन चारों सज्जनों ने हैदराबाद में हिन्दुओं पर शासन के अत्याचार, उत्पीडन और अनाचार

के विरुद्ध आवाज उठायी, जिसके कारण उन्हें निज़ाम द्वारा दिये गये कष्टों का शिकार होना पड़ा था।

नयी डगर

कुछ ही दिनों के बाद सिद्दीक़ दीनदार को पोल खोलने और इस्लामी शिक्षा की वास्तविकता को प्रकट करने के लिए श्री चन्दूलाल जी ने सन् १९२९ ई० में दिल्ली से प्रसिद्ध क़ुरानवेत्ता पंडित रामचन्द्र जी देहलवी को भाषण के लिए बुलवाया। हैदराबाद में सर्वसाधारण में यह चर्चा फैल गयी कि अरबी के एक आर्यसमाजी विद्वान् वक्ता आये हुए हैं, उनके भाषण सुनने चाहिए। देवीदीन बाग, सुलतान बाजार में पांच दिन तक पं० रामचन्द्र देहलवी के विभिन्न विषयों पर भाषण हुए। एक दिन बीत जाने के बाद श्री बंसीधर जी ने मुझको पं० रामचन्द देहलवी के व्याख्यान सुनने पर मजबूर किया और अपने साथ लिवा ले गये। देवीदीन बाग़ श्रोताओं से खचाखच भरा हुआ था। स्त्री-पुरुषों के सिरों का समूह समुद्र के सामान दूर-दूर तक दिखाई पड़ रहा था। जनता की निगाहें पंडित जी के आगमन की बाट जोह रही थी। एक कोने से नारा उठा—"जो बोले सो अभय"—"वैदिक धर्म की जय'-सारा मैदान इस नारे से गूँज उठा। कुछ मिनटों में ही जन-समूह से होता हुआ एक विशालकाय महापुरुष को जिनके सिर पर सफ़ेद पगड़ो बँधो थी. शेरवानो पहने हुए थे. और जिनकी मूँछें लम्बी थीं, और जो धीरे-धीरे जनता को हाथ जोड़ कर नमस्ते का उत्तर दे रहे थे, ऊँचे मंच पर जो भाषण के निमित्त निर्मित किया गया था और जिसे बड़े से सलीक़े से सजाया गया था, ले जाया गया। उस वेदी पर पहुँच कर देहलवी जी ने चारों तरफ़ दृष्टि फेरी और दूर-दूर तक फैले हुए जनसमूह को नमस्ते कहा। घड़ी की सूइयां ठीक छह बजा रही थीं कि एक छोटे क़द के खादीधारी वृद्ध सज्जन ने ज़ोरदार स्वर में कहा—"भाइयो! अब दृष्टान्त सम्राट् मधुरभाषी प्रवक्ता, क़ुरान-वेत्ता पंडित रामचन्द्र देहलवी भाषण करेंगे।" वे वृद्ध सज्जन आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेता और मन्त्री श्री चन्दूलाल जी थे। पंडित रामचन्द्र देहलवी ने श्रोताओं को सम्बोधित करते हुए कहा कि आज

के मेरे व्याख्यान का विषय होगा—"परमात्मा, आत्मा और भौतिक पदार्थों की प्राचीनता।"

मैंने आर्यसमाजियों के बारे में कुछ साधारण-सी बातें सुन रखी थी कि ये लोग मूर्तिपूजा के कट्टर विरोधी हैं, और हिन्दू धर्म के मूलभूत सिद्धान्तों को स्वीकार नहीं करते। हिन्दू धर्म की वर्ण-व्यवस्था को समाप्त करके अछूतों को ब्राह्मणों से रोटी-बेटी का सम्बन्ध स्थापित करने का प्रचलन चाहते हैं जो हिन्दू धर्म के सिद्धान्त के विरुद्ध है। इन सिद्धान्तों में मेरी कोई रुचि न थी, न कोई लगाव था, बल्कि घृणा इस बात की थी कि ये लोग भगवान् के अवतार को नहीं मानते। पंडित रामचन्द्र देहलवी के भाषण को एक घण्टे से अधिक समय तक बड़े ध्यान से सुनता रहा।

अन्धकार से प्रकाश की ओर

पंडित रामचन्द्र देहलवी ने ईश्वर की एकता और आत्मा तथा भौतिक तत्वों की प्राचीनता पर भाषण करते हुए वेद, कुरान के सन्दर्भों और प्रमाणों एवं तर्क द्वारा यह बात सिद्ध करने का सफल प्रयत्न किया कि ये तीनों वस्तुएँ आदिकाल से हैं। इस भाषण का मुझ पर जादू के समान प्रभाव तड़ा। पंडित जी के प्रमाणों ने मन मस्तिष्क को झिझोड़ कर रख दिया, और चिन्तन का नया मार्ग खोल दिया। मैं सभा से लौट कर रात भर सोचता रहा कि क्या ईश्वर के अवतार की आवश्यकता नहीं? क्या मूर्ति भगवान् नहीं? सोचते-सोचते आधी रात बीत गयी; निद्रा ने अपनी गोद में ले लिया। सवेरा हुआ तो प्रवृत्ति के अनुसार स्नान करके पूजा-स्थान पर पहुँचा। मूर्तियों के सामने बैठते ही पिछले दिन के प्रमाण और तर्क मस्तिष्क में गूँजने लगे। जिनको मैं पूजा कर रहा हूँ, क्या वास्तव में वे भगवान है? बहुत देर तक मस्तिष्क में संघर्ष चलता रहा। चलायमान आत्म किसी अचल वस्तु के सामने सिर झुकाये? मूर्ति को जिसे मानव ने बनाया हो, वह भगवान मेरे भाग्य के विधाता कैसे हो सकते हैं? दत्तात्रेय महाराज की मूर्ति को चुपके से अपने कमरे से निकाल कर माता जी के देवताओं की भीड़ में ले जा कर रख दिया, और पंडित

रामचन्द्र जी देहलवी का प्रात:कालीन भाषण सुनने देवीदीन बाग सुलतान बाज़ार चल दिया। पंडाल में भारी भीड़ थी। एक गोरे वर्ण के मोटे-ताजे सिर पर बिखरे बाल, शरीर पर कुर्त्ता और तहमद बांधे एक पंडित जो जिनका नाम बुद्धदेव विद्यालंकार था, "ईश्वर की सर्व—व्यापकता पर" वेदमंत्रों के उद्धरणों से यह प्रमाणित कर रहे थे कि भगवान एक देश का न हो कर सर्वव्यापक है, सब स्थानों पर है, सब वस्तुओं में है, परन्तु सब वस्तुएँ भगवान नहीं हैं। उदाहरण के लिए, जल अग्नि और आकाश में वह विद्यमान है, परन्तु ये सब भगवान नहीं हैं। भगवान के गुण एवं कर्म की व्याख्या पंडित जी ने बड़ी विद्वत्तापूर्ण शैली में जनता के सामने प्रस्तुत की। सरस्वती उनके मुख मंडल पर झलक रही थी। पंडित जी की वाणी एवं व्याख्यान ने मेरे हृदय में घर कर लिया। दूसरे दिन गोपाल बाग, सुलतान बाजार में राजा नारायण लाल जी पित्तो के बंगले पर जहाँ पंडितों को ठहराया गया था पहुँचा। गोरे रंग के भारी भरकम, छोटा कद, बड़ा पेट, पीठ के पीछे बहुत बड़ा गोल तकिया, गद्दी पर सफेद चादर बिछी हुई, उस पर सामने के तकिये पर मारवाड़ी बहीखाता लिखते हुए एक सज्जन से पूछा कि पंडित जी से मिलना है, क्या इस वक्त मिल सकता हूँ? उन्होंने उत्तर दिया वे इस समय जल पान कर रहे हैं। उनके आते ही आपसे मिलवा दूँगा। मेरे मन में रह-रह कर यह विचार आ रहा था कि उनका नाम तो जान लूँ। वे बड़े सज्जन और सद्भावनापूर्ण व्यक्ति दिखाई पड़ रहे थे। मैंने साहस करके उनका परिचय जानने के लिए उनसे पूछ ही लिया, क्या आप अपना नाम बता सकते हैं? उन्होंने कहा, मुझेगजानन्दगुप्त कहते हैं। यह बातचीत अभी समाप्त भी न होने पायी थी कि पंडित बुद्धदेव जी विद्यालंकार बाहर पधारे। मैंने आदर और विनय के साथ नमस्कार किया, और अपनी शंकाएँ प्रस्तुत करते हुए कहा कि मैं जानकारी के लिए आपसे पूछ रहा हूँ। मेरे हर प्रश्न का सन्तोष जनक उत्तर मिलता रहा। मन को पूरी तरह से सन्तोष मिला। अब मैं पूरी तरह से उस हाट का ग्राहक था। मन में नवीन चेतना और मस्तिष्क में सत्य की खोज की जिज्ञासा पूर्ण विश्वास तक पहुँच

चुकी थी। घर लौटा और पिता जी की जेब से एक रुपया निकाल कर सभा-स्थल की ओर चल दिया। सभा-स्थल पर पहुँचते ही सबसे पहला काम मैंने जो किया वह यह था कि आठ आने दे कर उर्दू सत्यार्थ प्रकाश खरीदा और पढ़ने लगा। सत्यार्थ प्रकाश का जादू-सा प्रभाव मुझ पर बढ़ता ही गया। उन्हीं दिनों हैदराबाद के दो प्रसिद्ध आर्य समाजी नेताओं से भेंट हुई। उनका नाम पंडित केशवराव कोरटकर जज हाईकोर्ट और चन्दूलाल आर्य था। जिस किसी से पूछा और मिला सभी ने इन दोनों का ही नाम बताया। हैदराबाद में इन दोनों के नाम का डंका वज रहा था। केशवराव जी की लोकप्रियता का यह हाल था कि जनता उनको अपना लीडर मानती थी। वे एक निर्भीक, साहसी और निःस्वार्थ व्यक्ति थे। हैदराबाद के सामाजिक, राजनीतिक एवं शैक्षणिक क्षेत्रों में उनकी महानता और विद्वत्ता अपने चरम शिखर पर पहुँची हुई थी। दोनों व्यक्तियों के त्याग, सेवा और लगन की चर्चा लोगों में सर्वत्र थी। चन्दूलाल जी आर्य समाज के प्राण थे। आपने एक दिन मुझे बुलवा कर कहा कि तुम जरूर समाज में आया करो। समाज तुम्हारे लिए स्वागत को तत्पर है।

दिशा ही बदल गयी

अब मन की दिशा बदल चुकी थी। पढ़ाई छोड़ चुका था। अब घर को बिना कमाई रोटी खाने को मन नहीं करता था। नौकरी की लालसा ने दर-दर फिराया। अन्त में नवाब रसूलयार जंग बहादुर के जागीरी दफ़तर में पच्चीस रुपये की नौकरी मिल गयी। परन्तु यह नौकरी अधिक दिनों तक न चल सकी। मेरे बहनोई राय हरिकिशन जी के छोटे भाई चन्द्रकिशन जी ने "सर्फेखास" (निजाम का निर्जी-विभाग) में व्यवस्था-सम्बन्धी कार्यालय में पचास रुपये की नौकरी पर नियुक्त करवा दिया। अब क्या था, खुशी का ठिकाना न रहा। पहले ही वेतन से समाज में जाकर चार आने का सदस्य बन गया। मेरे जीवन का यह पहला दिन था जब मैंने आर्य समाज को अपनाया और उसके हाथों में अपने जीवन की डोर थमा कर ऊँचा चढ़ता गया। मेरे आर्यसमाजी-होने की यह संक्षिप्त, पुरानी यादों की झलक है। मेरे जीवन की दिशा कुछ इस तरह बदल गयी—

अगला-सा वह मिज़ाज व आदत नहीं रहीं
वो हम नहीं रहे वह तबीयत नहीं रही ।

कल तक जिस भगवानन् की प्राप्ति के लिए दर-दर की खाक-छान कर कुछ न पाया था, अब सत्यार्थ प्रकाश ने भगवान् की प्राप्ति और मनुष्य जीवन के वास्तविक उद्देश्य का मार्ग दिखा दियो । मस्तिष्क में चिन्तन और आँखों में देखने का प्रकाश आ गया। पाखण्ड का जाल टूटा। सत्य से रिश्ता जुड़ा, ज़िन्दगी की घड़ी की सुईयां जो विपरीत दिशाओं में चल रही थी, अब पाखण्ड से छूट कर सही दिशा में चलने लगी। वैदिक धर्म के मार्ग पर चलने के बीच के युग की एक रोचक घटना यह है कि मेरे एक सम्बन्धी ने मुझमें विवाह के प्रति भावना जागृत कर दी। अटल निर्णय से विद्रोह करके विवाह करने का निश्चय किया, और मेरे नवयुवक-मित्र के कहने पर लडकी को देखने का कार्यक्रम बनाया गया। हम दोनों करीमनगर पहुँचे। मार्ग में अपशकुन हो गया। हम बस से उतरे ही थे कि बिल्ली आड़े आ गयी। मित्र ने कहा यह ठीक नहीं हुआ। लड़की वालों के घर पहुँचने भी नहीं पाये थे कि रास्ते में इस बात का पता चल गया कि उनके घर किसी को मृत्यु हो चुकी है। बनती दुनिया ही उजड़ गयी। हमें निराशा के सोथ घर लौटना पड़ा। उस सम्बन्धी नवयुवक का साथ छूट गया। आर्यसमाज के सत्संग में शुक्रवार के दिन शाम के पाँच बजे सुलतान बाजार पहुँचा। उस समय एक संन्यासी स्वामी वृत्तानन्द जी का उपदेश हो रहा था। सत्संग से लौटने के बाद मैंने निर्णय कर लिया कि पारिवारिक जीवन को तिलांजलि दे कर साधारण ढंग से जीवन व्यतीत करने और अपने पूर्व निर्णयों के विरुद्ध कोई काम न करने के संकल्प को प्रतिदिन मन में दृढ़ करता रहता। इस प्रकार मेरा निश्चय दृढ़ होता गया। वात बन गयी, मन सम्भल गया। मेरे बदलते जीवन के क्रियाकलापों को देख कर मेरे घर और पड़ोस के लोगों में अचरज किया जाने लगा। अब ढ़ोंग, पाखण्ड, अन्ध-विश्वास के अँधेरे से निकल कर सत्यार्थ प्रकाश में जीवन की यात्रा प्रारम्भ हो गयी। तूफ़ान से टकराने का निश्चय करके कर्मभूमि में पग धरने से जो प्रसन्नता और आत्मसन्तोष अनुभव कर रहा था, उससे मस्तिष्क की उलझन और थकान दूर हो गयी थी। जीवन-यात्रा का दूसरा दौर यहाँ से आरम्भ होता है जो पग-पग, पथ-पथ आगे की

ओर बढ़ता गया।

जीवन-यात्रा का दूसरा दौर

आर्यसमाज में नियमपूर्वक प्रवेश के ढंग से परिचय प्राप्त करके आर्यसमाज का सदस्य बन गया था। साप्ताहिक सत्संग में जाना आरम्भ कर दिया था। विद्वानों के व्याख्यान सुनता और उन पर चिन्तन, मनन करता कि उन बातों और सिद्धान्तों को मैं कब प्राप्त कर सकूँगा ताकि मैं भी उपदेशक बन कर आर्यसमाज का प्रचारक बन सकूँ। उन्हीं दिनों पंडित चन्द्रभानु जी सिद्धान्तभूषण को हैदराबाद में प्रचार के लिए बुलवाया गया था। पंडित जी ने एक वर्ष से अधिक समय तक हैदराबाद में प्रचार कार्य किया। आप वैदिक सिद्धान्तों के प्रकाण्ड विद्वान् थे। आप व्याख्यान-कला में निपुण थे। आपने विवेक-वर्धिनी स्कूल में विधवा-विवाह पर पौराणिकों से शास्त्रार्थ भी किया था। मैं भी कभी-कभी आपके साथ प्रचार के लिए जाया करता था। पंडित जी की सत्यप्रियता को हैदराबाद सरकार बहुत देर तक सहन न कर सकी। निज़ाम सरकार के गृहविभाग ने पंडित जी को बाहरी और अवांछनीय व्यक्ति बता कर उन्हें राज्य से बाहर निकाल दिया। परन्तु पंडित जी के सहवास से मेरी मनोकामना पूरी हो गयी। पथ मिल गया। पंडित जी ने उपदेशक विद्यालय लाहौर में जा कर शिक्षा प्राप्त करने का परामर्श ही नहीं दिया, अपितु विद्यालय के आचार्य पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के नाम पत्र में लिखा कि एक नवयुवक को विद्यालय में प्रवेश के लिए भेज रहा हूँ। विद्यार्थी को प्रविष्ट करने की कृपा करें।

मैं पंडित जी के पत्र के उत्तर की प्रतीक्षा में आँखे बिछाये बैठा था। जब पोस्टमैन घर का दरवाजा खटखटाता तो मैं इस आशा से दौड़ता कि शायद मेरे पत्र का उत्तर आ गया हो, क्योंकि इस पत्र को मैं पिता जी और भाई के हाथों में जाने से बचाना चाहता था। प्रतीक्षा में कई दिन निकल गये। हृदय की व्याकुलता बढ़ती गयी। अपने भाग्य को कोसता रहा कि मैं इस योग्य ही नहीं समझा गया कि विद्यालय में प्रवेश पा सकूँ। मैं लगातार पत्र लिखता रहा। धीरज का बाँध टूट

गया। कई प्रश्न मन में उठने लगे। एक दिन जब कि मैं निराश हो चुका था, डाकिया आया और एक लिफ़ाफ़ा दे गया। घर में माता जी के सिवा कोई और न था। माता जी ने पत्र ले कर मुझे उठाया और पत्र मुझे दे दिया। यह पत्र मेरी कामनाओं का आधार बन कर आया था। उसमें लिखा था कि एक मास के पश्चात् विद्यालय का नवीन सत्र आरम्भ होगा। उस समय तुम्हें प्रविष्ट कर लिया जाएगा। बस क्या था, तैयारी आरम्भ कर दी। पिता जी और माता जी को समझाया पर वे न माने। मेरे संकल्प को माता की ममता और पिता का दुलार भी डिगा न सका। हमारे विचारों में टकराव चलता रहा, और अन्ततः वह दिन आ ही गया जब मैं हैदराबाद से लाहौर के लिए चल दिया। यह घटना सन् १९३० की है।

जिस दिन मैं लाहौर के लिए चलने को था, उस दिन घर पर एक मेला-सा लग गया था। हर कोई आता और यही कहता, बूढ़े माँ-बाप को छोड़ कर जा रहे हो, यहां रह कर कमाओ, माँ-बाप की सेवा करो, अच्छे निकले आज कल के बच्चे, इसी दिन के लिए तुम्हें पाला-पोसा था कि मां को रोते व बाप को बिलखते छोड़ कर चल दो। हृदय में दया नहीं उत्पन्न होती। आजकल के नौजवानों के दिल पत्थर के बन गये हैं। मोह माया छू तक नहीं गयी है। मैं सबकी बातें सुनता रहा। स्टेशन जाने का समय निकट आता जा रहा था। स्टेशन जाने की तैयारी कर रहा था कि रोने-धोने का कुहराम मच गया, सबकी आंखों में आँसू थे। सभी निकट सम्बन्धी अपने आँसुओं के बहुमूल्य मोती आशीर्वाद के रूप में मुझ पर न्यौछावर कर रहे थे। मेरा निश्चय अडिग था, इसलिए माँ की ममता, पिता का दुलार, बहनों का प्रेम, सम्बन्धियों की आँखो के आँसू, मेरे पथ की बाधा न बन सके। मैं हैदराबाद रेल्वे स्टेशन पहुँचा। माता जी मुझे बार-बार छाती से लगा कर कहने लगी कि बेटा जिस काम के लिए जा रहा है, उसे पूरा करना पढ़ाई दिल लगा कर करना। मेरा आशीर्वाद सदा तेरे साथ रहेगा। माता जी के यह शब्द मेरी यात्रा के गन्तव्य के चिन्ह बन कर काम कर रहे थे। मेरे मन में बार-बार यह विचार आता रहा कि मुझे अब कुछ बन कर ही दिखाना है। मैंने प्रण किया

कि सारा जीवन आर्य समाज के कार्य में लगा दूँगा। इसलामी राज्य हैदराबाद में आर्य समाज की जड़ों को सुदृढ़ बनाने का प्रयत्न करुँगा। हिन्दुओं को हर कष्ट की अग्नि से बचाने के लिए प्राणों का भी बलिदान करना पड़े तो मुझे तैयार रहना होगा। उमड़ते हुए तूफान, दहकती हुई आग, पानी का तीव्र वेग, और सरसराती हुई वायु भी मेरे इस निश्चय को परिवर्तित करने में सफल न हो सकेगी।

सत्संग मिल गया

मैं हैदराबाद से दिल्ली और दिल्ली से लाहौर पहुँचा। यह मेरे जीवन की पहली यात्रा थी कि मैंने हैदराबाद की चारदीवारी से बाहर एक खुले संसार में पग धरा था। यात्रा का अनुभव न होने से मार्ग में कई प्रकार की बाधाएँ उत्पन्न हुईं। परन्तु प्रकृति ने हर कष्ट पर नियंत्रण पाने का मार्ग दिखाया। आशाओं, कामनाओं और निश्चय की सुगन्ध से भरे फूलों का उपहार लेने के लिए एक ऊँचे पूरे सात फीट लम्बे, शरीर के पहलवान दीप्तिमान मुखमण्डल, तेजस्वी नेत्र, खुले-बदन, लंगोटी कसे हुए एक चौड़े तख्त पर बैठे हुए संन्यासी के पवित्र चरणों में अत्यन्त श्रद्धा से नतमस्तक हो कर आशीर्वाद प्राप्त किया। स्वामी जी ने आवाज दी—सुखदेव, इनका नाम रजिस्टर में चढ़ा लो। प्रथमा में प्रवेश कर लिया जाए। हृदय को सन्तोष हुआ कि यात्रा सफल रही। परन्तु गन्तव्य की दूरी साहस और दृढ़ता से आगे निकलने का संकेत कर रही थी।

आप जानना चाहेंगे कि यह संन्यासी कौन है। ये लौह पुरुष, महान् तपस्वी, वीतरागी आर्य समाज के स्तम्भ निष्कपट संन्यासी पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी हैं। १९३० से १९३३ तक मैं दयानन्द उपदेशक विद्यालय में वैदिक सिद्धान्तों की शिक्षा के साथ-साथ इसलाम धर्म की शिक्षा, रिवाजों और नियमों के सभी उसूलों से परिचय प्राप्त करता रहा। संस्कृत के विद्वान् पंडित नरदेव जी सिद्धान्त शिरोमणि, पंडित शिवदत्त जी सिद्धान्त शिरोमणि, मौलवी आलिम फाजिल, 'महान् दार्शनिक ईश्वरचन्द जी शर्मा जैसे विद्वान् और तपस्वी आर्य समाज के प्राण पूज्य स्वामी स्वतंत्रानन्द जी महाराज की शिष्य-परम्परा में थे। पूज्य स्वामी जी के चरणों में बैठ कर जो थोड़ा बहुत पढ़ो-

सीखा उसको जीवन में अपनाने का कहाँ तक मैंने प्रयत्न किया है और कहाँ तक सफल हुआ हूँ यह कहना कठिन है। चालीस साल की साधारण-सी सेवा से आर्य जनता स्वयं निर्णय कर सकती है। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि मैंने जीवन के किसी ग़लत काम से आर्यसमाज जैसी पवित्र और संसार व्यापी संस्था पर किसी तरह की भी आँच नहीं आने दी है। जनता के परीक्षण और प्रयोगों में यदि मैं सफल हो सका हूँ, ऐसा जनता अनुभव करती हो तो यह सब गुरुजनों की शिक्षा और उनके जीवन के उच्च आदर्शों के प्रताप से हुआ है जो मुझे उनसे प्राप्त हुई। जीवन पुष्प में चरित्र की जो सुगन्ध है वह गुरूजनों की देन है। जो उनके उच्च-आदर्श-चरित्र और पवित्र भावनाओं से प्राप्त हुई है। जीवन की इस पगडण्डी पर आपको जो काँटे दिखाई दे रहे हैं, वह मेरे अपने भीतर की दुर्बलताओं की ओर इंगित कर रहे हैं और दुर्बलताएँ जब काँटा बन कर चुभती हैं तो संकेत देती हैं कि भविष्य में इनसे बचे रहना। एक बहती नदी की तरह बुराईयों को किनारे लगाते हुए आज तक जीवनधारा बहती चली आ रही है।

दयानन्द उपदेशक विद्यालय लाहौर को शिक्षा तक के घटनाक्रम को पुरानी यादों के आधार पर ही पाठकों के सामने प्रस्तुत कर रहा हूँ। मैंने सपने में भी यह न सोचा था कि तैंतालीस साल बाद मैं कुछ लिखूँगा। बीते हुए दिनों की कहानी को श्रृंखलाबद्ध रूप से स्मरण रख पाना तो कठिन है। परन्तु जो विचार और स्मृतियां मस्तिष्क में सुरक्षित थी उन्हें स्मृतियों के आधार पर ही उनमें से कुछ को बता पाने में प्रसन्नता और आनन्द अनुभव कर रहा हूँ।

अब आगे विचारों का यह समूह जो मस्तिष्क में दीर्घ समय से आसन जमाये हुए है, उनमें से एक-एक करके घटनाओं के उन पहलुओं को आपके सामने रखूँगा जिससे आपको अनुमान हो जाएगा कि सार्वजनिक कार्य के मार्ग में किन बाधाओं, कठिनाइयों, विवशताओं से गुज़रना पड़ता है, तब कहीं इस पथ का यात्री दूल्हे की तरह साज सज्जा और सम्मान से निकलता है।

आशा-निराशा के झूले पर

विद्यालय में एक दिन ऐसा आया जब कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब गुरुदत्त भवन ने मेरी छात्रवृत्ति समाप्त कर दी, क्योंकि उस साल सभा के बजट में से चार विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति बन्द कर दी गयी थी, जिनमें से मैं भी एक था। क्या सोच कर आया था क्या हो गया ? रोटी बन्द होने की नौबत आ गयी। आंखों के सामने अन्धेरा छा गया। शिक्षा-क्रम समाप्त होने को था ही कि एक दिन श्री वैद्य ठाकुरदत्त जी शर्मा अमृतधारा पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी से विद्यालय में मिलने आये हुए थे। बातों-बातों में स्वामी जी महाराज ने मुझ पर बीती कहानी उनसे कह डाली। स्वामी जी ने मुझे आवाज दी और कहा कि पढ़ाई जारी रखो। ठाकुरदत्त जी ने तुम्हारे लिए दो साल तक छात्र-वृत्ति देना स्वीकार कर लिया है। हैदराबाद से चलते समय भी मेरी आर्थिक कठिनाइयों को सुलझाने में श्री चन्द्रपाल जी ने पर्याप्त सहायता की थी। दोनों बार मुझ पर आया हुआ संकट टल गया। मेरा पढ़ाई-क्रम जारी रहा। अब वह दिन निकट आ चुका था जब कि छह मास बाद मैं विद्यालय का स्नातक होने को था कि स्वामी जी ने मेरे पास एक तार भेज दिया। तार में लिखा था, "तुम्हारे पिता प्लेग से बीमार हैं, उनके जीवित रहने की कोई आशा नहीं है।" रात बेचैनी और भांति-भाँति के विचारों के संसार में विचरते बीत गयी। दूसरे दिन आज्ञा प्राप्त करके पिता जी के दर्शन के लिए बड़ी व्याकुलता के साथ लाहौर से हैदराबाद की ओर चल पड़ा। दो महीने बीत गये। पिता जी का स्वास्थ्य ठीक होने लगा। मगर घर के नादानों ने उलझनों का कुछ ऐसा क्रम उत्पन्न कर दिया कि उनसे छुटकारा पाने में चार महीने लग गये। परीक्षा निकट थी। हैदराबाद से लाहौर पहुँचा। विद्यालय के सूचना पट पर परीक्षा में सम्मिलित होने वाले विद्यार्थियों की सूची लगा दी गयी थी। मेरा नाम उस सूचि में सम्मिलित नहीं था। क्या कहूँ मेरे हृदय पर इस घटना का जो प्रभाव पड़ा, उसको यहाँ लिपिबद्ध नहीं कर सकता। मेरे सभी साथी प्रसन्नता और आनन्द का संसार समेटे अपने-अपने घर इस संकल्प के साथ जा रहे थे कि वहाँ पहुँच कर वैदिक

धर्म प्रचार का उत्तरदायित्व सम्भाल लेंगे। मेरे मुख पर निराशा, मन की आशाओं पर निराशा की गहरी परछाई को देख कर महाशय कृष्ण जी ने जो आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध नेता थे और पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष होने के नाते स्वामी जी से मिलने पधारे थे, मुझको बुलवाया और कहा कि तुम किसी उपाधि के मोहताज नहीं हो। परमात्मा ने तुम्हें भाषणशक्ति की सम्पदा प्रदोन की हैं। सिद्धान्तों से तुम भलोभाँति परिचित हो चुके हो। इस विद्यालय में रहते हुए भाषण-प्रतियोगिताओं में दो बार पुरस्कार भी प्राप्त किया है। साहस को मत डिगने दो। एक और साल गँवाने की आवश्यकता नहीं हैं। स्वामी जी का आर्शीवाद लो और काम के मैदान में कूद पड़ो। स्वामी जी ने कहा कि महाशय जी ठीक कहते हैं। तुम्हारी योग्यता का विद्यालय से प्रमाण-पत्र दिया जाएगा।

दूसरे दिन शीतकाल के दिनों में जब कि सूर्य अपनी पूर्ण गरिमा के साथ आकाश पर चमक रहा था, ठंडी-ठंडी हवा के सरसराते झोंकों में धूप जीवन प्रदान कर रही थी, स्वामी जी तख्त पर बैठे हुए धूप का आनन्द ले रहे थे। मैं उनके निकट जा कर खड़ा हो गया। स्वामी जी ने पूछा, घर जाने का इरादा है? मैंने उत्तर दिया, "जी हां। आपका आशोर्वाद मेरी जीवन-यात्रा का निधि होगा। उसके लिए प्रार्थी हूँ।" और उनके पवित्र चरणों पर सिर रख दिया। स्वामी जी ने मेरी पीठ पर हाथ रख कर कहा, "जाओ। ईश्वर सब भला करेंगे। लेकिन एक बात याद रखना-खाना घर का खाना, काम दयानन्द का करना और गालियाँ आर्य समाजियों की खानो।" स्वामी जो के इन वचनों को जीवन-यात्रा के संबल के रुप में आज तक गाँठ बाँधे फिर रहा हूँ।

विद्यालय के वे दिन आज भी मुझको याद आते हैं तो प्रसन्नता के कारण आँखों से आँसू निकल पड़ते हैं। स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज का हम सब विद्यार्थियों के साथ पिता के समान व्यवहार और प्रेम जीवन-सरिता बना हुआ है। यहाँ एक घटना का उल्लेख, जो अत्यन्त रोचक है, प्रस्तुत करता हूँ।

सेवा-कार्य का पहला पाठ

सन् १९३२ के मध्य में जम्मू कश्मीर में शेख अब्दुल्ला अध्यक्ष मुसलिम कांफ्रेंस के नेतृत्व में हिन्दू-मुसलमान षडयन्त्र रचा गया था। जम्मू-कश्मीर का सारा क्षेत्र मुसलमानों की धर्मान्धता और गुंडागर्दी की दुर्घटनाओं से प्रभावित हो चुका था। प्रतिदिन समाचार पत्रों में दर्दनाक और जंगलीपन की खबरें प्रकाशित हो रहो थी कि हिन्दुओं को वहुत वुरी तरह से मौत के घाट उतारा जा रहा है। मकान जलाये जा रहे हैं। स्त्रियों का सतीत्व नष्ट किया जा रहा है। इन दुर्घटनाओं से पीड़ित होने वाले हिन्दुओं की सेवा और सहायता करने का आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाव और लाहौर ने निश्चय किया। तदनुसार उपदेशक विद्यालय के विद्यार्थियों को ले कर स्वामी जी जम्मू पहुँचे और स्थान-स्थान पर केन्द्र बना कर सहायता का कार्य बड़े स्तर पर आरम्भ कर दिया। जम्मू-कश्मीर, राजोरी, अखनूर, लद्दाख, पुंछ इत्यादि स्थानों पर हज़ारों हिन्दुओं को मुसलमानों ने मौत्त के घाट उतार दिया था और लद्दाख में बुद्धमत के लोगों को मुसलमान बनाने की योजना तेज़ कर दी गयी थी। कश्मोर की पूरी घाटी में दगा-फ़साद की आग भड़क उठी थी। कश्मीर जिसे स्वर्ग कहा गया है और जो आनन्द का स्थान समझा जाता है, उसे मानवता के शत्रुओं ने नरक में परिवर्तित कर दिया था। सैंकड़ों बरसों का आपसी प्रेम जुदा हो चुका था।

कश्मीर के महाराज हरीसिंह को रियासत से बेदखल करके स्वयं को वेताज का वादशाह बनाने की शेख़ अब्दुल्ला तैयारी कर रहे थे। आज से कुछ समय पूर्व तक भी कश्मोर, शेख़ अब्दुल्ला की राजनैतिक कूटनीतियों का शिकार होता रहा है। आर्यसमाजियों ने शेरे-कश्मीर के सारे षड्यंत्रों को, बड़ी दिलेरी और साहस से सामना करके असफल बना दिया था। पूरे जम्मू-कश्मीर में स्वामी जी ने पन्द्रह केन्द्र स्थापित किये और हर केन्द्र पर पाँच-पाँच विद्यार्थी और एक-एक अध्यापक निगरानी के लिए नियुक्त किया। इस निर्णय के प्रकाश में मुझे राजोरी का वह क्षेत्र दिया गया, जहाँ हिन्दुओं की हत्या सार्वजनिक

रूप से की गयी थी। राजोरी वह पवित्र स्थान है, जहाँ हिन्दू धर्म के रक्षक, पराक्रम के देवता, वीर बन्दा बैरागी का जन्म हुआ था।

राजोरी के सहायता-कैम्प इंचार्ज के रूप में तीन मास तक वहाँ रहते हुए सेवा कार्य करता रहा। हमारे निरीक्षक थे पंडित नरदेव जी सिद्धान्त शिरोमणि मुंशी फ़ाज़िल। तीन मास के पश्चात् हम पाँचों विद्यार्थी और पंडित जी जम्मू पहुँचे तो वहाँ पूज्य स्वामी जी महाराज लाहौर से पहुँच चुके थे। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब और प्रादेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के विद्यार्थी कड़ाके की सर्दी में जान हथेली पर रख कर दिन-रात सेवा में लगे रहे। जम्मू के प्रसिद्ध हिन्दू महा-सभाई नेता श्री प्रेमनाथ जी डोगरा ने हम सबको बिदाई दी और पूज्य स्वामी जी और महात्मा हंसराज जी को सेवा कार्य के लिए धन्यवाद दिया। हम लोग जम्मू से वापस हो कर लाहौर पहुँचे।

पुलिस हवालात में

दूसरी घटना जो मेरे जीवन के लिए आनन्दपूर्ण कही जा सकती है वह भी सन् १९३२ की ही है। महात्मा गांधी ने 'हरिजन एवार्ड' के विरुद्ध जो ब्रिटिश सरकार ने जारी किया था और जिसके कारण हिन्दुओं और हरिजनों के बीच घृणा उत्पन्न करने का घिनौना षड्यन्त्र रचा गया था यरवदा जेल में भूख हड़ताल आरम्भ कर दी थी। इस घटना से सारे भारत में दुःख और क्रोध तथा अंग्रेजों के प्रति बदला लेने की भावना नवयुवकों में बड़ी तीव्रता के साथ उत्पन्न हो गयी थी। उस समय स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी लाहौर कांग्रेस के कार्यवाहक प्रधान नियुक्त हुए थे। आपने हम पाँच विद्यार्थियों को आज्ञा दी कि आज शाम के पाँच बजे अनारकली के चौराहे पर सत्याग्रह करना होगा। इस आदेश को शिरोधार्य करके सुखदेव (मारिशस) सोमदेव (लखनऊ), धर्मदत्त (रावलपिंडी), महावीर (हरियाणा) और मैं अनारकली चौराहे पर पहुँचे और भाषण देना आरम्भ कर दिया। दफ़ा २४४ की अवज्ञा में पुलिस ने हम पाँचों को अनारकली थाने में ले जा कर चार दिन तक हवालात में बन्द रखा और पाँचवें दिन हमको रिहा कर दिया। मेरे जीवन में यह पहला अवसर था जब मैं सत्याग्रह करके पुलिस की

हवालात में जा रहा था। पुलिस हवालात में रहने से एक लाभ यह हुआ कि पुलिस का भय निकल गया। दूसरे दिन समाचार पत्रों में यह समाचार प्रकाशित हुआ कि डाक्टर मूँजे और डा० अम्बेडकर के बीच समझौता हो चुका है। महात्मा गाँधी ने अपना अनशन व्रत तोड़ दिया है।

लड़े भिड़े और घायल हुए

तीसरी घटना भी अपने स्थान पर अपना महत्व रखती है। गुरुदत्त भवन रावी रोड के साथ ही इस्लामियो हाईस्कूल का भवन था। दोपहर की छुट्टि के समय स्कूल के विद्यार्थी हमारे विद्यालय से लगे हुए मैदान में आते और रोटी खा कर वहीं हड्डियां छोड़ जाते थे। एक दिन स्कूल के विद्यार्थी हमारे विद्यालय के मैदान में घुस आये और हम पाँच-सात विद्यार्थियों पर हमला कर दिया। उनके साथियों ने पत्थर फेंकना आरम्भ कर दिया। हमने भो डट कर जवाब दिया। विद्यालय के सारे विद्यार्थी हमारी सहायता को आ गये। पन्द्रह मिनट तक जबरदस्त हंगामा रहा। इस हंगामे में जहाँ विरोधी लड़के बुरी तरह घायल हुए वहीं मैं ओर मेरा साथी भो जख्मी हुए थे। पुलिस के वहाँ पहुँचने तक हंगामा समाप्त हो चुका था। इस्लामिया हाईस्कूल के हैडमास्टर और पूज्य स्वामी जो के बीच-बचाव से हंगामा रफ़ा—दफ़ा हो गया।

मनोकामना पूरी हुई

सन् १९३३ के अन्त में शिक्षा से निवृत्त हो कर हैदराबाद पहुँचा तो आर्यसमाजी क्षेत्र में एक अजनबी था। आर्यसमाज सुलतान बाजार के मंत्री श्री चन्दूलाल जो तथा सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन के प्राण पंडित विनायकराव विद्यालंकार से भेंट हुई। मैंने स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी का दिया हुआ प्रमाण-पत्र विनायकराव जी को दिखाया। उन्होंने कहा कि आर्यसमाज के सत्संग में तुम्हारा भाषण रखा जाएगा। 'अन्धा क्या चाहे दो आँखें' वाली कहावत पूरो हुई। मैं

चाहता था कि मेरा व्याख्यान हो जाए तो फिर मेरे लिए रास्ता साफ़ हो जाएगा और मैं आर्यसमाज के कार्य में लग जाऊँगा। हैदराबाद एक इस्लामी रियासत थी, इसलिए शुक्रवार को सार्वजनिक अवकाश रहने के कारण यहाँ के आर्यसमाज का सत्संग शुक्रवार को हुआ करता था। मैं ठीक समय पर सत्संग पहुँच गया। 'क़ुरान में वेदों का तेज' विषय पर मैंने पैंतीस मिनट तक भाषण दिया। हैदराबाद की परिस्थितियाँ और वातावरण के बदलने के कारण हिन्दू जनता ने इस भाषण को बहुत पसन्द किया। स्वभाव में ओज स्वाभाविक था। जनता ने मेरा हौसला बढ़ाया। मुझे अपने इस भाषण की सफलता पर ऐसा अनुभव हुआ कि मैंने कोई बहुत बड़ा मोर्चा जीत लिया हो।

कार्य में जुट गया

आर्यसमाज के मंत्री चन्दूलाल जी ने मुझसे समाज का काम लेना आरम्भ कर दिया। उन्हीं दिनों सूचना मिली कि हैदराबाद से दूर बीदर ज़िले के एक गाँव "हलीखेड़" में पंडित रामचन्द्र जी देहलवी पधारने वाले हैं। मन्त्री जी ने कहा कि मुझे भी उनके साथ चलना होगा। हैदराबाद राज्य में पंडित विनायकराव जी विद्यालंकार बार-ऐट-ला का नाम प्रसिद्धि के आकाश पर नक्षत्र बन कर चमक रहा था। हिन्दू जाति के अधिकारों की सुरक्षा इन्हीं दोनों महानुभावों के हाथों में थी। इसी प्रकार भाई बंसीलाल जी आर्य वकील और भाई श्यामलाल जी आर्य वकील इन दोनों भाइयों ने हैदराबाद राज्य में आर्यसमाज के प्रचार की धूम मचा दी थी। राज्य भर में आपके नाम और काम की चर्चा लोकप्रिय हो चुकी थी। जो भी व्यक्ति उनसे मिलता वह इन भाइयों की असाधारण योग्यता, वीरता, साहस और सत्यनिष्ठा की प्रशंसा करता था। इसी कारण मन में यह इच्छा उत्पन्न हुई कि इसके दर्शन किये जाएँ। अन्ततः यह अवसर हाथ आ ही गया।

दो प्रकाश-स्तम्भ

हैदराबाद से पंडित रामचन्द्र जी देहलवी, पंडित विनायकराव जी विद्यालंकार, श्री चन्दूलाल जी, श्री सूर्यप्रताप जी, श्री चन्द्रपाल जी,

श्री गजानन्द जी, पंडित दत्तात्रयप्रसाद जी एडवोकेट और मैं हलीखेड़ के लिए चल पड़े। हलीखेड़ के पूरे बाज़ार को सुरुचिपूर्ण ढंग से सजाया गया था। देहलवी जी के स्वागत के लिए हज़ारों आर्यसमाजी राज्य के कोने-कोने से आये थे। गाँव में पहुँचते ही हज़ारों आर्यसमाजियों के साथ आर्यसमाज के प्राण भाई वंसीलाल जी ने हार्दिक और भव्य स्वागत किया। सारा वायुमण्डल जय-जयकार के नारों से गूँज उठा। हाथों में तलवारें, लाठियाँ और पिस्तौल लिये हुए चिटगोपा, उदगीर और बीदर के बाँके और मतवाले नवयुवक देहलवी जी के आगे-आगे चल रहे थे। दोनों भाई पंडित जी के साथ चल रहे थे। समारोह तीन दिन तक आनन्द और उत्साह के साथ चलता रहा। देहलवी जी के व्याख्यानों ने हिन्दुओं में नवजीवन के प्राण फूँक दिये। भाई बंसीलाल जी वकील का व्याख्यान प्रेरणा और उत्साह से भरपूर था। पण्डाल में सन्नाटा छाया हुआ था। दूसरे दिन सवेरे भाषण करते हुए पंडित विनायकराव विद्यालंकार ने एक वेदमन्त्र की व्याख्या करते हुए श्रोताओं को अचरज में डाल दिया। अन्तिम दिन सबेरे मुझे भी भाषण देने का अवसर दिया गया। मेरे भाषण का शीर्षक था 'पाप से डरो पापियों से नहीं।' इस व्याख्यान का नवजवानों पर अच्छा प्रभाव पडा। हलीखेड़ की जनता का उत्साह देखने योग्य था। बार-बार नारों की गूँज से वहाँ की जनता में आनन्द और उत्साह की लहर दौड़ जाती थी। निज़ामी हकूमत की तानाशाही से टकराने की नवयुवकों में भावना और उत्साह को देख कर ठंडे खून में भी गर्मी पैदा हो जाती थी। जोशीले वातावरण और जनता के हृदय में भड़कती हुई आग को ठंडा करने की कला में भाई बंसीलाल जी वकील दक्ष थे। बंसीलाल जी ने कहा कि मैं आप आर्यसमाजियों के उत्साह को आदर की दृष्टि से देखता हूँ। मैं आपके दिलों में छिपे अरमानों और उमंगों को आपकी मस्ती से भरी आँखों में देख रहा हूँ। निज़ाम की हुकूमत के अत्याचार और अनाचार से टक्कर लेने की आपकी मनोकामना पूरी होगी। कोई भी कार्य समय के अनुसार करने पर ही सफलता प्राप्त हो सकती है। प्रतीक्षा कीजिए और आर्य समाज के संगठन को दृढ़ बनाइए। दोनों भाइयों की वीरता, साहस और बलिदान के उमड़ते हुए स्रोत को देख कर मुझे भी दृढ़ निश्चय और उत्साह की प्रेरणा मिली। यूँ समझिए कि राज्य भर में

फैले कष्टों के अन्धकार में भाई बंसीलाल जी और भाई श्यामलाल जी को हिन्दू जनता प्रकाश-स्तम्भ समझने लगी थी।

वैदिक आदर्श

तीन दिवस तक आर्य प्रतिनिधि सभा निज़ाम राज्य की कार्य—कारिणी की बैठक चलती रही। आर्यसमाज की आवाज को दूर-दूर तक पहुँचाने और जनता को वैदिक धर्म के उच्च आदर्शों से परिचित कराने के लिए एक साप्ताहिक पत्र 'वैदिक आदर्श' निकालने का निर्णय हुआ। इस कार्य के लिए उर्दू, अंग्रेजी और हिन्दी के साहित्यकार और अनुभवी श्री सूर्यप्रताप जी और श्री चन्द्रपोल जी को कार्य-भार सौंपा गया और मुझे इन दोनों के साथ इनके निर्देशों पर कार्य करने के लिए बीस रुपये मासिक पर नियुक्त किया गया। परन्तु खेद की बात थी कि तीन मास व्यतीत हो जाने पर भी 'वैदिक आदर्श' का प्रकाशन सम्भव न हो सका। कारणों का यहाँ पर उल्लेख अनावश्यक होगा। एक दिन ऐसा हुआ कि भाई बंसीलाल जी वकील किसी आवश्यक काम से हैदराबाद पधारे हुए थे। उन्होंने पत्र के न निकलने का बहुत बुरा मनाया और वापस लौटने से पूर्व आपने 'वैदिक आदर्श' का पहला अंक प्रकाशित कर दिया। श्री चन्दूलाल जी के मशविरे श्री मनोहर सिंह जी एम० ए० एल-एल० बी० को सम्पादक नियुक्त किया गया और मुझ पर इस पत्र के प्रकाशन का उत्तरदायित्व सौंपा गया। प्रकाशन के दो मास बाद १३ खुरदाद सन् १३४४ फसली (रियासत हैदराबाद में उस समय फ़सली सन् का प्रचलन था) तदनुसार १८ अप्रैल, सन् १९३५ ईस्वी को निज़ाम सरकार की ओर से एक नोटिस जारी की गयी कि क्यों न तुमको मनानूर (निज़ाम राज्य का काला पानी) भेज दिया जाए।

मुझे पत्रकारिता का कोई अनुभव न था। इस पत्र को लोकप्रिय बनाने में कौन-सी गुप्त शक्ति काम कर रही थी यह ईश्वर ही जाने। इसकी लोकप्रियता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि कभी असाधारण परिस्थितियों के कारण पत्र प्रकाशित न होता तो जनता बड़ी बेचैनी और निराशा अनुभव करती थी। यह मेरी लेखनी

का प्रभाव नहीं बल्कि उस समय के ज्वलंत प्रश्नों का प्रभाव था। स्वर्गीय भाई ठाकुर उमराव सिंह और पंडित सोहनलाल जी वानप्रस्थी का मुझे बहुत ही सहयोग मिला। उनके सहयोग के कारण मुझे इस क्षेत्र में भी सफलता मिली। एक साल के भीतर ही 'वैदिक आदर्श' हिन्दू जनता के सच्चे प्रतिनिधि के रूप में पत्रकारिता के क्षेत्र में चमकने लगा। उसके विरुद्ध कुछ मुसलिम पत्रों 'वक्त', 'रहबरे-दकन', 'सुबहे-दकन' दैनिक और 'अलआज़म' साप्ताहिक ने जबरदस्त आन्दोलन आरम्भ कर दिया। निज़ाम सरकार चाहती यही थी। नवाब अलीयावर जंग बहादुर (वर्तमान राज्यपाल महाराष्ट्र) ने, जो उस समय सूचना विभाग (जिसको आगे चल कर सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग का नाम दिया गया) के निर्देशक थे, आदेश जारी किया कि 'वैदिक आदर्श' पत्र का प्रकाशन बन्द किया जाता है। इस पत्र के बन्द हो जाने से मुझे दुःख भी हुआ और प्रसन्नता भी। दुःख इस बात का था कि हिन्दू जनता की सेवा का अवसर जाता रहा और प्रसन्नता इस बात की थी कि पत्रकारिता के क्षेत्र में आशा से अधिक सफल रहा। 'वैदिक आदर्श' पत्र यहाँ की हिन्दू जनता में आदर्श के साथ जीवन व्यतीत करने का साहस उत्पन्न कर सका।

लेखन और भाषण बन्द

मेरे विरुद्ध मुसलिम पत्रकारिता ने प्रोपेगण्डा जारी कर रखा था। इसका परिणाम यह हुआ कि २६ खुरदाद सन् १३४७ फ़सली तदनुसार ३० अप्रैल १९३८ ईस्वी को निज़ाम सरकार ने मुझ पर एक वर्ष के लिए लेखन और भाषण का प्रतिबन्ध लगा दिया। इस प्रकार का प्रतिबन्ध मेरे साथ ही नवाब बहादुर यार जंग बहादुर अध्यक्ष इत्तेहादुल मुसलमीन पर भी लगाया गया। वैदिक आदर्श' ने हैदराबाद के वातावरण को ही बदल कर रख दिया था। निर्भीकता और साहस के साथ निज़ाम सरकार के अत्याचारों का रहस्योद्घाटन करने में यह पत्र ऐतिहासिक एवं महत्वपूर्ण भूमिका निभा चुका था। अगर यह कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति और आत्मप्रशंसा न होगी कि 'वैदिक आदर्श' पत्र ने जिस शान से अपना जीवन आरम्भ किया था उसी शान

से पूरा भी किया। आज भी पाठकों का मस्तिष्क 'वैदिक-आदर्श' को भूल नहीं सका है।

एक वर्ष तक भाषण पर प्रतिबन्ध को वरदान समझ कर प्रतिदिन निजी रुप से नवयुवकों से सम्पर्क स्थापित करके अनाचार और अत्याचार के विरुद्ध आवाज़ उठाने और समय पड़ने पर सरकार से संघर्ष के लिए कटिबद्ध रहने के ज़ोरदार अभियान का क्रम जारी किये रहा। 'आर्य गज़ट' लाहौर 'प्रकाश' साप्ताहिक लाहौर में गुप्त नाम से लेख भी लिखता रहा। 'आर्य गज़ट' पत्र के सम्पादक श्रीमान् दुर्गाप्रसाद जी शर्मा जो अभी जीवित हैं, ने बड़ी निर्भीकता से हैदराबाद की जनता की सेवा की। निज़ाम सरकार ने 'आर्य गज़ट' लाहौर का हैदराबाद रियासत में प्रवेश निषिद्ध करके मुझे दूसरी बार हैदराबाद नगर की सीमा में ही नज़रबन्द कर दिया गया। मैं इस आदेश की अवज्ञा की तैयारी कर रहा था कि आर्यसमाज के वरिष्ठ नेता पंडित विनायकराव विद्यालंकार ने मुझे परामर्श दिया कि मैं इस आज्ञा के विरुद्ध कोई क़दम न उठाऊँ। छः मास बीत गये, आशा थी कि आज्ञा वापस ले ली जाएगी, परन्तु ऐसा नहीं हुआ। अन्त में मैंने निश्चय किया कि आज्ञा का उल्लंघन किया जाए। इस निर्णय की सूचना मैंने हैदराबाद राज्य के प्रधान मंत्री नवाब हैदर नवाज जंग बहादुर को दे दी। उसकी एक प्रतिलिपि पुलिस कमिश्नर नवाब रहमतयार जंग बहादुर को भी प्रेषित कर दी।

मुक़दमा, जेल और रिहाई

मेरे इस पग का परिणाम यह हुआ कि एक सप्ताह के बाद मेरी नजरबन्दी का आदेश रद्द कर दिया गया और दूसरे सप्ताह में राज्य का तख्ता उलटने के आरोप में भारतीय दण्ड विधान की धारा १८३ के अन्तर्गत गिरफ़तार करके अदालत के सामने पेश कर दिया गया। जमानत पर रिहा हुआ और मुकदमा चलता रहा। पंडित विनायकराव बार-एट-ला, पंडित गोपालराव बोरगाँवकर वकील हाईकोर्ट और श्री दिगम्बरराव लाटकर एडवोकेट ने बड़ी योग्यता से पैरवी की

परन्तु वही ढाक के तीन पात वाली कहावत के अनुरूप अदालत ने एक वर्ष का सपरिश्रम कारावास और जुर्माने का आदेश सुनाया। उसी शाम को मुझे पुलिस की सख्त निगरानी में सेण्ट्रल जेल भेज दिया गया। पंडित विनायकराव जी और दिगम्बरराव लाटकर एडवोकेट ने हाईकोर्ट में उस निर्णय के विरुद्ध अपील कर दी, जिसके परिणामस्वरूप हाईकोर्ट ने मुझे बरी कर दिया।

संघर्ष के मार्ग पर

आर्यसमाज सुलतानबाज़ार का वार्षिक उत्सव निकट आता जा रहा था। तैयारियाँ बड़ी धूमधाम से हो रही थीं। इस अवसर पर आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध विद्वान् उपदेशकों के सम्मिलित होने के चर्चे हो रहे थे। उनके आगमन का समाचार सुन कर नगर में उत्साह का वातावरण उत्पन्न हो गया था। पंडित रामचन्द्र जी देहलवी, पंडित बुद्धदेव जी विद्यालंकार, पंडित धर्मभिक्षु जी, पंडित सत्यदेव जी (लखनऊ) पधारे हुए थे। पंडित धर्मभिक्षु जी के व्याख्यानों ने हैदराबाद की हिन्दू जनता में नवजीवन का संचार कर दिया था। वे संस्कृत और अरबी के विद्वान थे। आर्यसमाज का उत्सव अत्यन्त सफल रहा।

एक मास के पश्चात् आर्यसमाज का चुनाव होने वाला था। समाज के वातावरण में चुनाव की सरगर्मी थी। मैंने भी चन्दूलाल जी के ग्रुप का साथ देना स्वीकार कर लिया था। क्योंकि यह ग्रुप आर्यसमाज में अपना प्रभाव रखता था। चुनाव हुए, चन्दूलाल जी, मोहनलाल जी बलदवा, गजानन्द जी गुप्त और पंडित विनायकराव जी विद्यालंकार मेरे कार्य से सन्तुष्ट थे। इसलिए उन्होंने मंत्री पद के लिए मेरा नाम प्रस्तुत कर दिया, और मैं सर्वसम्मति से मन्त्री निर्वाचित हो गया। पंडित विनायकराव जी विद्यालंकार के नेतृत्व में काम करने का अवसर प्राप्त होने से मेरा उत्साह और भी बढ़ता गया। लगातार चार वर्षों तक आर्यसमाज का मन्त्री बना रहा। मेरे मंत्रित्व काल में पंडित देवेन्द्र नाथ जी शास्त्रीसांख्यतीर्थ, पंडित सूर्यदेव जी शर्मा एम० ए० (अजमेर), पंडित प्रियव्रत जी विद्यावाचस्पति महात्मा नारायण स्वामी जी, पंडित

स्वतन्त्रानन्द जी, आचार्य रामदेव जी, महात्मा खुशहालचन्द जी खुरसन्द, मौलवी सत्यदेव जी जैसे सुप्रसिद्ध और विद्वान् नेताओं के विचारों से यहाँ की जनता लाभान्वित होती रही।

हैदराबाद में आर्यसमाज के जलसों में पचास हज़ार से अधिक हिन्दुओं के जमघट को देख कर सरकार परेशान हो गयी। हुकूमत की ओर से आर्यसमाजियों पर सख्तियाँ आरम्भ हो गयी। पंडित मंगलदेव जी शर्मा पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। पंडित रामचन्द्र जी देहलवी जैसे मधुरभाषी भाषणकर्ता पर हलीखेड़ के भाषण का बहाना बना कर धर्म के अपमान के आरोप में बीदर की अदालत में चालान पेश कर दिया गया। इस मुक़दमे के कारण सारे भारत में दुःख और क्रोध की लहर दौड़ गयी। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान महात्मा नारायण स्वामी जी ने सरकार के नाम तार भेज कर चेतावनी दी और तीव्र अप्रसन्नता की अभिव्यक्ति करते हुए पंडित जी के विरुद्ध चलाये जाने वाले मुक़दमे को वापस लेने पर बल दिया। मुक़दमा वापस ले लिया गया। हैदराबाद राज्य में पंडित जी के प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया।

हैदराबाद में आयोजित नवयुवक सम्मेलन में अपने भाषण में मैंने कहा था कि "हैदराबाद ८२ हज़ार वर्गमील का विशाल जेलख़ाना है। सरकार के विरुद्ध क़दम उठाने के लिए हमको विवश होना पड़ेगा।" इस वाक्य को राजद्रोह का रंग दे कर सरकार ने मेरे विरुद्ध अदालत में चालान पेश कर दिया। मुक़दमा चला और छह मास कारावास तथा २०० रुपये जुर्माने की सज़ा सुनायी गयी, और मुझे जेल भेज दिया गया।

एक दीप स्तम्भ बुझ गया

हैदराबाद के कई स्थानों पर आर्यसमाज के विरुद्ध सरकार मनमानी कार्यवाहियों में लगी हुई थी। जिलों में भाई बंसीलाल जी वकील और भाई श्यामलाल जी बहुत ज़ोर-शोर से आर्यसमाज का प्रचार कर

रहे थे। उनकी जान को हर समय खतरा लगा हुआ था। सरकार और मुसलमानों की ओर से दोनों भाइयों को समाप्त कर देने के षड्यंत्र रचे गये। परन्तु मारने वाले से बचाने वाला बलवान् होता है। 'जाको राखे साइयाँ मार सके ना कोय' के अनुसार दोनों भाइयों के जीवन की रक्षा प्रकृति स्वयं कर रही थी। इन भाइयों का आर्यसमाज के इतिहास में वही स्थान है जो एक जीवित शहीद को प्राप्त होता है, जिसे उन्होंने अपने कार्यों द्वारा प्राप्त किया। एक दिन आर्यसमाज में ऐसा आया जब कि १७ दिसम्बर १९३८ को भाई श्यामलाल जी, जो आर्य जगत् के जिन्दा शहीद थे, बीदर जेल में आर्य जाति के लिए सुकरात की तरह ज़हर का प्याला पी कर शहीद हो गये। उसकी कहानी भी बड़ी दर्दनाक है।

१९३८ में आर्यसमाज उदगीर की ओर से होली के अवसर पर जुलूस निकाला गया था। जुलूस अपने पूर्व निश्चित मार्ग से गुज़र रहा था कि पाशा मियाँ वकील और वली मोहम्मद साहब वकील के इशारे पर जुलूस पर मुसलमानों ने हमला कर दिया। इसमें दोनों गुट के लोग जख्मी हो गये और एक व्यक्ति मारा गया। 'उल्टा चोर कोतवाल को डाँटे' के अनुसार सोलह आर्यसमाजियों को भाई श्यामलाल जी के साथ हत्या के आरोप में गिरफ़तार कर लिया गया। मुक़दमा चल ही रहा था कि वे बहुत बीमार हो गये। डाक्टर की दी हुई दवाएँ बीदर जेल के असिस्टेंट जेलर ने जहर मिला कर भाई जी को पीने के लिए दी। उन्होंने दवाई समझ कर पी ली। भाई श्यामलाल जी के बलिदान से राज्यभर में एक कुहराम मच गया। चारों ओर दुःख के बादल छा गये। हर आर्य समाजी की आँखों में आँसू थे। आर्यों का लोकप्रिय, हृदय-प्राण, दुखों का साथी, हिन्दुओं का रक्षक संसार से चल दिया था।

भाई श्यामलाल जी के बलिदान से दो मास पूर्व मैं पंडित विनायक राव विद्यालंकार के मकान से ध्रुवपेठ (धूलपेठ) के साम्प्रदायिक दंगे के सिलसिले में उनके कहने पर मुक़दमे की पैरवी के लिए दिल्ली से आये हुए प्रसिद्ध वकील श्री ब्रजनारायण तव्वक्ली से परामर्श करने के लिए विकाजी होटल (आबिद रोड) जा रहा था कि राघवेन्द्र राव जी आफ़िसर सी० आई० डी० हैदराबाद ने रास्ते में गिरफ़तार करके बाग़

-ग्राम स्थित ज़िलों की पुलिस कोतवाली के कार्यालय पर पहुँचा दिया। पुलिस विभाग के कार्यालय पर पहुँचते ही मिस्टर हालमेन्स, पुलिस अधिकारी ने निज़ाम के फ़रमान का एक मुहरबन्द लिफ़ाफ़ा मुझे दिया, जिसमें लिखा था, "तुमको तीन साल के लिए मनानूर में नज़रबन्द किया जाता है।" यह घटना १० आजुर सन् १३४८ फसली, तदनुसार १५ अक्तूबर १९३८ की है। मनानूर हैदराबाद राज्य का कालापानी कहलाता था। हैदराबाद से ३० मील दूर महबूबनगर जिले में स्थित एक ऊँची पहाड़ी के घने जंगल में जहाँ शेर और चीते रहा करते थे उस स्थान पर जेल में रख दिया गया। एक वर्ष पाँच मास इक्कीस दिन के बाद मनानूर से मुक्त किया गया।

कालापानी और मुक्ति

आर्यसमाज के ऐतिहासिक सत्याग्रह के सामने निज़ाम सरकार ने घुटने टेक दिये थे। शासन का दम टूट चुका था। अरबपति, धन और शक्ति पर इतराने वाले निज़ाम की शक्ति आर्यसमाज की चट्टान से टकरा कर समाप्त हो चुकी थी। आर्य सत्याग्रह में पन्द्रह हज़ार आर्य-समाजी भारत के कोने-कोने से सम्मिलित हुए थे। इक्कीस आर्यवीर शहीद हुए। निज़ाम सरकार ने आर्य सत्याग्रह समिति के अध्यक्ष श्री घनश्याम सिंह जी गुप्त से बातचीत करने के लिए हैदराबाद आने की इच्छा प्रकट की थी। परन्तु आपने श्री देशबन्धु गुप्ता को सरकार से बातचीत करने के लिए हैदराबाद रवाना किया। देशबन्धु जी आर्य-समाज के चुने हुए नेताओं में से थे। संधिवार्ता सफल हुई। मगर एक शर्त निज़ाम सरकार को स्वीकार्य न थी। वह शर्त मेरी रिहाई से सम्बन्ध रखती थी। देशबन्धु जी ने घनश्याम सिंह पूछा कि इन परिस्थि-तियों में क्या किया जाए। उत्तर मिला समझौता नहीं होगा। नवाब अलीयावर जंग बहादुर और प्रधानमन्त्री सर अकबर हैदरी के बीच संघर्ष चलता रहा और अन्त में निश्चय किया गया कि दो मास के पश्चात् मुझको रिहा कर दिया जाएगा। इस निर्णय के बाद समझौते पर हस्ताक्षर हो गये।

दो मास व्यतीत हो जाने के बाद भी सरकार ने मुझे रिहा नहीं किया, तो घनश्याम सिंह जी ने महात्मा गाँधी जी से कह कर पंडित अभयदेव जी विद्यालंकार आचार्य गुरुकुल काँगड़ी को हैदराबाद भेजा। आचार्य जी और सर अकबर हैदर योगीराज अरविन्द घोष के शिष्य होने के नाते गुरुभाई थे। एक मास इक्कीस दिन के बाद मेरी रिहाई अमल में आयी। रिहाई से पूर्व प्रधानमंत्री हैदरी साहब ने फ़राहाबाद को ग्रीष्मकालीन स्थान के रुप में बसाने की योजना पर विचार करने के लिए आस्ट्रेलिया के विशेषज्ञों के साथ फ़राहाबाद का दौरा किया था। तब वापसी के समय मनानूर जेल भी आये थे। दस मिनट तक मुझसे बातचीत में कई बातें पूछीं। मैं उनका उत्तर देता रहा। पुलिस इंस्पेक्टर को आदेश दे कर राजधानी हैदराबाद के लिए रवाना हुए। दूसरे दिन बारह बजे रात को अशफ़ाक़ुउल्ला खाँ पुलिस आफिसर की निगरानी में मुझे मनानूर से हैदराबाद पहूँचा दिया गया।

मनानूर में रहते हुए जो पत्र मैंने अपने भाई भांजी सरलादेवी को लिखे थे, उनमें से यहाँ दो तीन उद्धत कर रहा हूँ। मेरे पत्रो पर जो मैं अपने घर लिखता या घर से जो मेरे पास आते थे, उनकी कड़ी जाँच (सेंसर) होती थी, और उन्हें पुलिस के सबसे बड़े अधिकारी के द्वारा जाँच के बाद भेजा जाता था।

पत्र १—भाई के नाम : आप मुझसे मिलने के लिए पधारने वाले हैं, परन्तु ध्यान रहे कि यहाँ आकर मुझ से न मिल पाने का जो कष्ट और असुविधा आपको सहन करनी पड़ेगी, वह मेरे हृदय की व्याकुलता और विकलता में वृद्धि का कारण बन सकती है। मेरे लिए आप किसी अवाँछित विपदा का शिकार न हो जाएँ, इसलिए पधारने की आवश्यकता नहीं है।

पत्र २—भांजी के नाम : बेटी सरला, मेरे पत्र को तुम ध्यान से पढ़ो और समझने का प्रयत्न करो। हिन्दी की शिक्षा के साथ संस्कृत की शिक्षा का क्रम भी जारी रखो। शिक्षा-प्राप्ति के अतिरिक्त किसी और

कार्य कीं ओर ध्यान न दो। प्रतिदिन संध्या हवन किया करो, और आर्यसमाज के सत्संग में जाया करना।

पत्र–३ भाई के नाम : सुना है कि आर्य सत्याग्रह सफलता के साथ समाप्त हो गया है। निज़ाम सरकार ने आर्यसमाज की सभी माँगें स्वीकार कर ली हैं। आर्यसमाज की इस शानदार विजय पर जितना भी गर्व किया जाए कम है। आर्यसमाज की शक्ति ने पहाड़ जैसे निज़ाम शासन को हिला कर रख दिया है। मेरी रिहाई की चिन्ता न करें। मुझे रिहा करने के लिए निज़ाम को आर्यसमाज के सामने झुकना ही पड़ेगा। "देर आयद दुरुस्त आयद।"

मेरी जेल से रिहाई की खुशी में देवोदीन बाग़ में स्वागत समारोह आयोजित किया गया था। दूसरे दिन सवेरे की गाड़ी से सोलापुर पहुँचा। स्टेशन पर आर्यजगत के सर्वमान्य नेता सत्याग्रह के स्रष्टा भाई बंसीलाल जी वकील और बहन विद्यावती जी के अतिरिक्त अनेक आर्य बन्धु स्वागत के लिए उपस्थित थे। भाई बंसीलाल जी ने विजय-भाव से गले लगा कर कहा, "श्यामलाल की जगह मेरे लिए आप हैं।" उनके ये शब्द वास्तव में उनके हृदय के प्रतिबिम्ब थे। आर्य सत्याग्रह की भव्य विजय और प्रसन्नता की स्मृति में एक उपदेशक विद्यालय स्थापित किया गया था। आर्य समाज के प्रकाण्ड पंडित व साहित्यकार गंगाप्रसाद जी उपाध्याय, त्यागमूर्ति ध्रुवानन्द जी शास्त्री और पं० गोपदेव जी दर्शनाचार्य की विद्वत्ता से लाभान्वित हो कर तेलंगाना, मराठावाड़ा और कर्नाटक में वैदिक धर्म प्रचार का विस्तार किया गया।

ढाक के तीन पात

अब क्या था, रियासत हैदराबाद में आर्य समाज की तूती बोल रही थी। राज्य-भर में उत्साह का वातावरण उत्पन्न हो गया था। कुछ दिनों तक आर्य समाज के लिए बाधाओं का मार्ग साफ़ रहा। परन्तु निज़ाम सरकार की यह चुप्पी एक नये तूफ़ान और कुचक्र के

आगमन की सूचना देने वाली प्रमाणित हुई। आर्य समाज की उभरती हुई शक्ति निज़ाम को एक नजर न भाई और सरकार की ओर से फिर अत्याचार और अनाचार का चक्र प्रारम्भ हो गया। अन्याय और कष्टों का फिर से क्रम आरम्भ हो गया। गाँव-गाँव में गुंडे आर्यों के विरुद्ध पंक्तिबद्ध हो गये। आर्यसमाजी नवयुवकों ने उनका डट कर सामना किया। गुंडों को पुलिस का पूरा समर्थन प्राप्त था, जिसके कारण हिन्दुओं को अत्याचार का शिकार होना पड़ा, और कई नौजवान इस संघर्ष में बलिदान भी हुए। गुंजोटी में वेदप्रकाश जी, कल्याणी में धर्मप्रकाश जी, निजामाबाद में राधाकिशन जी, हुमनाबाद में शिवचन्द्र जी और उनके तीन साथी और उमरी में दत्तात्रेय जी शहीद हुए। इनका बलिदान आर्यसमाज के लिए ऐसी क्षति थी जिसकी पूर्ति असम्भव थी।

ये नवयुवक आर्यसमाज के आकाश के जाज्वल्यमान नक्षत्र थे जिन पर आर्यसमाज को गर्व है। एक ओर निज़ाम की शक्ति, तो दूसरी ओर वीर, जीवट आर्यसमाजियों के साहस ने मुग़लकाल की उस स्मृति को ताज़ा कर दिया था जब कि राजपूत, मराठों और सिक्खों ने हिन्दू जाति की महानता और संस्कृति की ध्वजा को झुकने न देने के लिए अपने-आप मृत्यु का वरण किया था।

पं० नरेन्द्र जी मनानूर से रिहाई के बाद

घातक आक्रमण

हैदराबाद राज्य की जनता में जागृति की भावना और राज—नैतिक जागृति उत्पन्न करने के विचार से हैदराबाद के तीन भागों में आंध्र महासभा, महा–
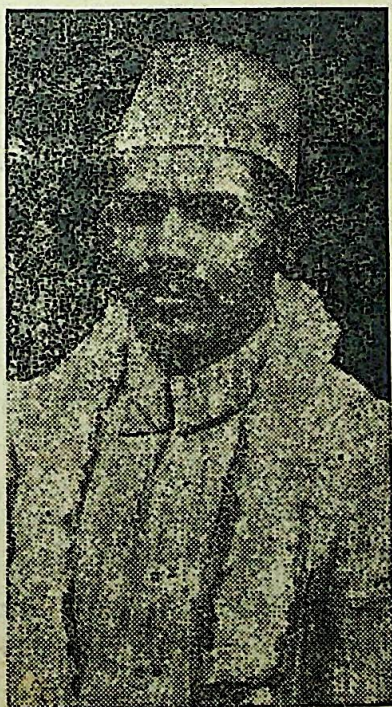
राष्ट्र महासभा और कर्नाटक महासभा की स्थापना की गयी थी। समय-समय पर हैदराबादी जनता से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओं की ओर सरकार का ध्यान दिलाया जाता रहा। इसके अतिरिक्त हैदराबाद एज्यूकेशनल कान्फ्रेंस की स्थापना करके मातृभाषा की उन्नति की समस्या के सम्बन्ध में सरकार का ध्यान समय-२ पर दिलाया जाता रहा। किन्तु हैदराबाद सरकार के कान पर जूँ तक न रेंगी। बल्कि मर्ज बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की। नये-नये सरकारी आदेश जारी किये गये। उदाहरण के लिए आदेश नम्बर ५३, जो आखड़ों और प्राइवेट स्कूलों की स्थापना के सम्बन्ध में था। इन परिस्थितियों में शान्तिपूर्ण ढंग से जनता की भावनाओं को प्रकट करने के लिए प्रति वर्ष 'कांफ्रेंस' का अधिवेशन तेलंगाने के किसी न किसी स्थान पर आयोजित हुआ करता था। जड़चरला जिला महबूबनगर में श्रीमान् जमलापुरम् केशवराव जी की अध्यक्षता में अधिवेशन हो रहा था। उसमें भाग लेने के लिए मैं जड़चरला गया हुआ था। एक दिन मैं और महबूबनगर के प्रसिद्ध आर्यसमाजी नेता श्री सिद्धलिंगप्पा जी चार बजे चाय पीने के लिए श्री निज़ामुद्दीन इंस्पेक्टर पुलिस (जो मनानूर में मेरी निगरानी पर नियुक्त थे) के मकान पर गये। चाय के बाद जब हम पण्डाल की ओर वापस हो रहे थे कि जड़चरला की ओर से एक मोटर बड़ी तेजी से हमारी मोटर की तरफ़ नजदीक से गुज़री। पीछे बैठा एक नौजवान रिवाल्वर से मुझ पर हमला करना ही चाहता था कि श्री सिद्धलिंगप्पा जी ने बड़ी फुर्ती से मोटर को आगे बढ़ा लिया, जिसके कारण मैं और मेरे दोनों साथी मौत का शिकार होने से बच गये।

जिला मेदक के तालुका जोगीपेट के एक गाँव टेकमाल में आर्य-समाज की स्थापना के सम्बन्ध में पंडित बुद्धदेव जी, पंडित गोपदेव जी, पंडित विनायकराव जी और मैं श्री बसव मानय्या जी अध्यक्ष आर्य—समाज जोगीपेठ के साथ पहुँचे। सायंकाल सभा होने वाली थी कि वहाँ के मुसलमानों ने नंगी तलवारों और बन्दूकों के साथ जुलूस निकाला जिसके कारण सारे गाँव में आतंक छा गया था। समाज की स्थापना न हो सकी। हम सब हैदराबाद वापस हो गये परन्तु मेरे दिल में यह खटक बाकी रही कि किसी भी परिस्थिति में टेकमाल जा कर आर्यसमाज की

स्थापना की जानी चाहिए। दिन-तिथि निश्चित की गई। मोटर लारी का प्रबन्ध किया गया। हैदराबाद से एस० वेंकटस्वामी जी एडवोकेट गंगा राम जी एडवोकेट, राजरेड्डी जी, मानिकराव जी, लक्ष्मीनारायण जी (कबाड़ीगुड़ा) और मैं टेकमाल पहुँचे। दूसरे दिन सवेरे जनाब अबुलहसन क़ैसर साहब के साथ पंडित विनायकराव जी विद्यालंकार अध्यक्ष आर्यप्रतिनिधि सभा टेकमाल पहुँच कर दरगाह की चारदीवारी में पहुँच गये, जहाँ मुसलमान बहुत बड़ी संख्या में सशस्त्र मौजूद थे। ज़िला मेदक के सुपरिंटेंडेंट पुलिस मिस्टर चारी ने समुचित प्रबन्ध कर रखा था। इस लिए कोई दुर्घटना नहीं हुई। आर्य समाज की स्थापना पंडित विनायकराव जी के हाथों सम्पन्न हुई। टेकमाल की सभा के बाद साथियों की इच्छा पर निज़ाम सागर देखने का कार्यक्रम बनाया गया। लौटते समय रात हो चुकी थी। निज़ाम सागर से दस मील दूर एक नाले में छिप कर बैठे दो पठानों ने हमारी मोटर पर फ़ायर किया। श्री गंगाराम एडवोकेट की कमर के ऊपर के हिस्से में छर्रा लगा और खून बहने लगा। दूसरा छर्रा मेरी गाँधी टोपी को छूता हुआ सनसना कर निकल गया। इसी मोटर में पंडित विनायकराव जी भी थे। ईश्वर की कृपा से हम सब बाल बाल बच गये।

आर्य प्रतिनिधि सभा के उपदेशक साम्बमूर्ति जी सिद्धान्तरत्न नागर कर्नूल में आर्य समाज की स्थापना के लिए पहुँचे। वहाँ से वे आर्य समाज की स्थापना कर के लौट रहे थे कि तहसील की निगरानी पर नियुक्त अरबों ने उन पर तलवार से हमला कर दिया। बुरी तरह घायल, वे नागर कार्नूल के अस्पताल में दाखिल किये गये। मुझे उनके ज़ख्मी होने की सूचना मिली तो मैं नागर कर्नूल पहुँचा। साम्बमूर्ति जी की तबियत का हाल-चाल देखा। ज़ख्म काफ़ी गहरे थे। मैं वहाँ एक दिन के लिए ठहर गया। रात के ग्यारह बजे मैं जिस मकान में ठहरा हुआ था, अरबों ने चारों ओर से घेर लिया। बन्दूकों की आवाज़ से भयभीत हो कर लोग घरों में ही बन्द हो रहे थे। इस घटना के समय एक नवयुवक ही मेरे साथ था। रात भर हंगामा होता रहा। इस हंगामे की सूचना सिद्धलिंगप्पा महबूब नगर को मिलते ही वे रात के दो बजे नागर कार्नूल पहुँचे। वे मेरी ओर आ ही रहे थे कि अरबों ने उन पर हमला बोल दिया। वे किसी तरह बच निकले। दूसरे दिन

सुबह उनसे भेंट हुई, तब घटना का पता चला। हम दोनों ने अस्पताल पहुँच कर साम्बमूर्ति जी के आक्रमणकारियों के विरुद्ध कार्यवाही करने का उद्देश्य प्रकट किया, तो उन्होंने मना कर दिया। कारण पूछने पर मालूम हुआ कि वे छिपे हुए कम्युनिस्ट हैं। अरबों के विरुद्ध कोई कार्यवाही करना पसन्द नहीं करते। उनकी यह बात सुनकर बड़ा अचरज हुआ। बाद में पता चला कि वे किसी हत्या के मामले से भी सम्बन्धित हैं, इस लिए उन्होंने गिरफ्तारी से बचने के लिए आर्यसमाज का सहारा लिया है। उस समय वे कम्युनिस्ट पार्टी के सक्रिय सदस्य थे।

सम्मेलन में हंगामा

आर्य सत्याग्रह के पश्चात् सभा ने यह निश्चिय किया था कि प्रति वर्ष आर्य सम्मेलन मनाया जाए। इस निश्चय के अनुसार सन् १९४२ ईस्वी से अधिवेशन का आयोजन किया जाने लगा। २२ अप्रैल सन् १९४५ को गुलबर्गा में सम्मेलन मनाया जा रहा था। इस सम्मेलन के अध्यक्ष राजा नारायण लाल जी पित्ती थे। सम्मेलन का उद्घाटन आर्य-समाज के प्रसिद्ध नेता घनश्याम सिंह जी गुप्त स्पीकर मध्य भारत करने वाले थे। गुप्त जी पर निज़ाम सरकार की ओर से भाषण देने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया और मेरे नाम भी नोटिस जारी की गयी कि मैं हैदराबाद छोड़कर बाहर नहीं जा सकता। यह नोटिस मुझे गुलबर्गा में मिली। मैंने सरकार को इस नोटिस का जवाब दे दिया।

सम्मेलन के अन्तिम दिन जब कि उत्सव समाप्त होने वाला था, सायंकाल चार बजे एक पुलिस कांस्टेबल पण्डाल में आ कर बीड़ी पीने लगा। श्री शिवकुमार जी ने उस कांस्टेबल को बीड़ी पीने से मना किया। परन्तु उसने अनसुनी कर दी और जल्दी से पुलिस कैम्प में जा कर अपने साथियों में यह अफ़वाह फैला दी कि आर्य समाजियों ने उसकी खूब पिटाई की है। बस फिर क्या था, आव देखा न ताव श्री हरिश्चन्द्र जी डी० एस० पी० ने पण्डाल में आ कर मुझसे कहा कि आप तीनों को कलेक्टर साहब ने बुलाया है मैं पंडित विनायकराव जी और पं० गणपतराव जी शास्त्री उनकी बात पर भरोसा करके चल पड़े। वहाँ

पहुँचने पर क्या देखते हैं कि पचास-साठ कांस्टेबल बन्दूकों और लाठियों से लैस हैं। दो चार मिनट भी बात होने न पायी कि पुलिस के जवान हम पर टूट पड़े। हीरा-लाल जी को सख्त चोट आयी। राव साहब को खूब पीटा गया। शास्त्री जी का सिर जख्मी हो गया। मेरे पैर की हड्डी टूट गयी और सिर में भारी ज़ख्म आये। दवाखाना गुलबर्गा में हम सबको शरीक कर दिया गया, परन्तु राव साहब के प्रयत्नों के कारण नवाब साहब छत्तारी (सइदुलमुल्क बहादुर) प्रधानमन्त्री, हैदरा-बाद ने एम्बुलेंस भेज कर मुझे उस्मानिया दवाखाने में दाखिल करा दिया। सिर में सात टाँके लगाये गये और पैर की हड्डी को दूसरी हड्डी से जोड़ कर ठीक किया गया। एक महीना बीस दिन उस्मा-निया अस्पताल में रह कर घर लौटा ही था कि गुल-बर्गा का नोटिस दुबारा मुझ पर जारी किया गया जिसके अनुसार मैं एक साल हैदराबाद नगर में नज़रबन्द रहा। मेरी गिरफ़्तारी और नज़रबन्दी आये दिन होती रहती थी और जेल मेरे लिए घर-प्राँगन हो गया था। निज़ाम सरकार की निगाह में नरेन्द्र "नागवार, नापसंदीदा बाग़ी" था। घर पर हो या बाहर सी० आई० डी हर समय साये की तरह मेरी निगरानी रखती थी।
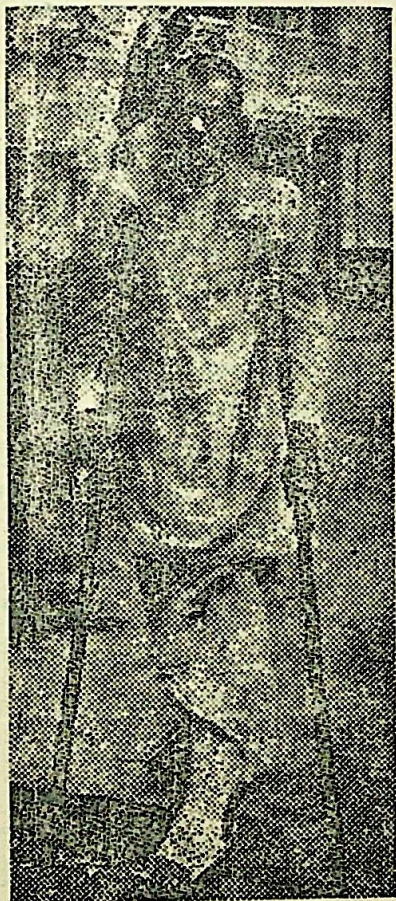
ज़ख्मी पाँव लिये नरेन्द्र जी

आतंक का राज्य

सारी रियासत हैदराबाद में भय, अत्याचार, अन्याय और दुखों का क्रम आरम्भ हो गया था। इत्तेहादुल मुसलमीन ने "जिहाद" का नारा लगा दिया गया था। गाँव गांव में गुंडे हिन्दुओं के विरुद्ध पंक्तिबद्ध हो गये। आर्य समाजी नवयुवकों ने डटकर गुंडों का साहस के साथ सामना किया। मुसलिम पुलिस अफ़सरों का पूर्ण समर्थन गुंडों को प्राप्त होने के कारण कई आर्य नवयुवक उनके अत्याचार का शिकार हो शहीद हो गये, जिनका वर्णन इससे पूर्व आ चुका है।

हैदराबाद में आर्य समाज के इतिहास का भारतीय इतिहास में भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। एक ओर निज़ाम सरकार की शक्ति, तो दूसरी ओर बीर और प्राण न्यौछावर करने वाले आर्यसमाजियों का साहस जिन्होंने वैदिक संस्कृति की पताका को झुकने नहीं दिया, बल्कि उसकी रक्षा के लिए हँसते हँसते अपने प्राण न्यौछावर कर दिये।

गाँव-गाँव हमले होने लगे। बाज़ार लूटे जाने लगे। स्त्रियों का सतीत्व लूटा गया। मंदिरों को गिराया जाने लगा। इस तरह अत्याचार और अनाचार पूर्व बंगाल और पाकिस्तान के सरहदी प्रान्त के अत्याचार और अनाचार को भी शर्मिन्दा किया हुआ था।

जब पानी सर से ऊँचा होने लगा और सारा राज्य एक विशाल जेलखाना बन गया तो मरता क्या न करता के अनुरूप हैदराबाद के राजनीतिक नेता समस्या निराकरण के लिए कौन-सा मार्ग अपनाया जाए इस पर विचार करने के लिए विवश हो गये।

स्वतंत्र हैदराबाद का आन्दोलन

सन् १९४७ में भारत की स्वतन्त्रता के साथ हैदराबाद के निज़ाम के मस्तिष्क में हैदराबाद की आज़ादी का सौदा सवार हो गया था और

स्वतन्त्र हैदराबाद का आन्दोलन आरम्भ कर दिया गया। अंजुमने इत्तेहाद-उल-मुसलमीन ने बड़े ही जोर से राज्य भर में प्रचार शुरू कर दिया था।

इस आन्दोलन के विरुद्ध कांग्रेस ने स्वामी रामानन्द तीर्थ के नेतृत्व में सत्याग्रह का आरम्भ कर दिया। छह-सात हजार लोगों ने सत्याग्रह में भाग लिया। निज़ाम के सारे जेलखाने भर चुके थे। हैदराबाद नगर में शान्ति बनाये रखने का प्रयत्न केवल बाहरी दुनिया की आँखों में धूल झोंकने के बराबर था। जिलों में रज़ाकारों ने ऐसे-ऐसे अत्याचार किये जिनका वर्णन करते हुए कलेजा मुँह को आता है, और आँखों से रक्त-बिन्दु टपक पड़ते हैं। निज़ाम ने अपने राज्य की पृथक् स्वतन्त्रता की घोषणा करके भारत सरकार के सन्मुख एक गूढ़ और चिन्ताजनक प्रश्न उत्पन्न कर दिया था। राज्य के नवयुवकों ने "रज़ाकारों" का डट कर सामना किया। कांग्रेस के इस आन्दोलन में आर्यसमाजी सदा पहली पंक्ति में रहे। मुझे सत्याग्रह से पहले ही गिरफ़तार करके सेन्ट्रल जेल चंचलगुड़ा में नज़रबन्द कर दिया गया था। मेरी गिरफ़तारी के एक सप्ताह बाद कांग्रेस सत्याग्रह के नेता स्वामी रामानन्द तीर्थ, डा० मेलकोटे, श्री कृष्टाचार्य जोशी एडवोकेट ने सुलतानबाज़ार में सत्याग्रह करके अपने-आपको गिरफ़तारी के लिए प्रस्तुत किया। आपको गिरफ़्तार करके जेल लाया गया।

भारत सरकार ने जब तिरुमलगिरि और बोलाराम में स्थित अपनी सेना को वापस बुला लिया, तो निज़ाम और उनकी सरकार का हौसला बढ़ गया। "रज़ाकारों" का ज़ोर दिन प्रति दिन बढ़ता गया। स्थान-स्थान पर हत्या और विनाश की घटनाएँ होने लगी। उस समय आर्यसमाजी नवयुवक चुपचाप तमाशाई बन कर हाथ पर हाथ रख कर नहीं बैठ सकता था। नवयुवकों ने हथियार उठा लिये और अपनी वीरता से "रज़कारों" के दाँत खट्टे कर दिये।

श्रीमान् भाई शेषराव जी वाघमारे एडवोकेट ने जिस साहस और बलिदान की भावना का परिचय दिया वह हैदराबाद की स्वतन्त्रता के

इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में लिखे जाने योग्य है। आप बहुत हीं कर्मठ और निष्ठावान आर्यसमाजी हैं। आपने अपने लड़के-लड़कियों के विवाह जन्म-मूलक जाति-पोति तोड़ कर किये हैं, जिसके कारण उन्हें अपने घर और अन्य सम्बन्धियों के कड़े विरोध का मुकाबला करना पड़ा था।

क्रान्तिकारी नारायण बाबू

यहाँ एक ऐसे नवयुवक का उल्लेख किये बिना नहीं रह सकता जिसने निज़ाम मीर उस्मान अली खाँ और उनके शासन के अत्याचार और अनाचार का बदला लेने और भारत के साथ को गयी ग़द्दारी की सजा देने के लिए अपने-आप को मौत के मुँह में झोंकते हुए निज़ाम की मोटर को बम का निशाना बनाया था। मगर निशाना ठीक न लगने से निज़ाम बच गये। श्री नारायण राव पवार बी० ए० एल-एल० बी० और श्री गंडय्या जी को गिरफ़्तार कर लिया गया और मुक़दमा चलाया गया। नारायणराव और गंडय्या जी को मौत की सजा सुनाई गयी और तीसरे जगदीश गिरफ़्तार नहीं हो सके थे। श्री नारायण राव पवार और गंडय्या जी ने अपनी उमंगों और अरमानों से भरी जवानी को भारत माता के चरणों में समर्पित कर दिया था।

हैदराबाद राज्य में अत्याचार और आतंक का अत्यधिक बोलबाला था। इस्लामी राज्य की स्थापना और भारत से अलग स्वतन्त्र रूप से राज्य स्थापित करने की हैदराबादी राज्य के शासक नवाब मीर उस्मान अली खाँ ने अपने एक विशेष आदेश के द्वारा घोषणा कर दी थी : "हैदराबाद एक स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में रहना चाहता है।" इस घोषणा से बहुसंख्यक हिन्दुओं की आँखे खुली और उन्होंने निज़ाम की इस घोषणा को भारत के लिए एक जबर्दस्त षड्यन्त्र और खतरा अनुभव किया। हैदराबाद की जनता ने करवट ली और यह निश्चय किया कि निज़ाम के इस आपत्तिजनक निर्णय के विरुद्ध हैदराबाद राज्य में भिन्न-भिन्न विचारों के लोगों को एक केन्द्र पर एकत्रित कर राज्य की फ़ासिस्ट शक्तियों के विरुद्ध एक मोर्चा बनाया जाए।

हैदराबाद स्टेट कांग्रेस जो अहिंसा में विश्वास रखती थी उसने सत्याग्रह की घोषणा कर दी, परन्तु हम नवयुवकों ने राज्य के विभिन्न ग्रामों में जहाँ जघन्य अत्याचारों की आग में हिन्दू जनता धू-धू कर जल रही थी, जिसे परोक्ष में निज़ाम का आशीर्वाद प्राप्त था, उसके विरुद्ध, निज़ाम और कासिम रज़वी के स्वप्न को साकार न होने देने के लिएं कृतसंकल्प हो कर क्रान्तिकारी पग उठाने का, रज़ाकारों से डट कर लोहा लेने का निश्चय किया।

इन विचारों को मूर्तरुप देने के उद्देश्य से मेरे मन में भाँति-भाँति की भावनाएँ और विचार उठने लगे थे। महीनों विचारों की दुनिया में भटकता रहा। अन्ततः मैं इस परिणाम पर पहुँचा कि १९४२ के "भारत छोड़ो" आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने वाले नाना पाटील ने जो क्रान्तिकारी पार्ट अदा किया था जिससे अंग्रेजों के मस्तिष्क ठिकाने लग गये थे और अंग्रेजी शासन के लिए बहुत बड़ा खतरा उत्पन्न हो गया था, उनसे परामर्श लेना चाहिए। मैं और श्री गोपालदेवजी कल्याणी दोनों नाना पाटील के पास पहुँचे।

नाना पाटील से हैदराबाद की परिस्थिति पर हमने बहुत देर तक बात-चीत की। परिस्थितियों को स्पष्ट करते हुए मैंने उनसे निवेदन किया कि वे अपने अनुभव के आधार पर हमें क्या कुछ करना चाहिए इसका निर्देश करें। नाना पाटील किर्लोसकरवाड़ी के निकट एक गाँव में रहा करते थे। उन्होंने "पतरी सरकार" के नाम से एक संगठन का गठन किया था। हमारी उनसे दो दिन तक वार्ता होती रही। नाना ने क्रान्ति के उपायों से हमें अवगत कराया। साथ ही हमें सावधान किया कि यह काम बड़ी हिम्मत और सावधानी से करना चाहिए। उनके इस अनुभव से लाभ उठा कर खड़की, जिसका नाम आजकल शिवाजीनगर है वहाँ पहुँचे। यहाँ पर हैदराबाद-निवासी श्री राजरेड्डी जी तोप का साँचा और श्री माणिकराव जो आगापुरा एक दिन पूर्व ही पहुँच गये थे। हम सब लोग सेना के एक वरिष्ठ अधिकारी से सम्पर्क स्थापित कर उनसे छह हथगोले प्राप्त कर हैदराबाद लौट आये

इन बमों को फलों की टोकरी में छुपा कर लाया गया। हमें लेने के लिए श्री देवय्या जी आर्य की मोटर बेगमपेट स्टेशन पहले ही पहुँच चुकी थी। उसमें बैठ कर हम सीधे आर्य समाज सुलतानबाज़ार पहुँच गये। निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार चार बम मराठवाड़ा भेजे गये और दो बम आर्य समाज मन्दिर सुलतानबाज़ार के मेरे कमरे में ही गये। इसके प्रयोग की निश्चित तिथि के पूर्व ही मेरी गिरफ़्तारी श्री धरणीधरप्रसादजी वाजपेयी, इन्सपेक्टर सी० आई० डी० द्वारा हुई। श्री तुलसीराम ने, जो आर्य समाज में सेवक के रूप में काम करते थे, मेरे पकड़े जाने के पश्चात् श्री नारायणराव जी पवार, बी० ए० एल-एल० बी० (जिन्होंने प्राणों को हथेली में ले कर निज़ाम की कार पर बम फेंका था) को मेरे कमरे में रखे दो बम दे दिये। ये बम निज़ाम पर फेंकने के काम आये। हैदराबाद की जनता के दुर्भाग्य से निज़ाम बाल-बाल बच गया और श्री नारायणराव जी को फाँसी की सजा सुनाई गयी थी किन्तु उन्हें फाँसी नहीं दी गयी। निज़ाम के काल में सज़ा देने पर भी किसी को फाँसी नहीं दी जाती थी। निज़ाम फाँसी की सज़ा को आजीवन कारावास में बदल देते थे।

हैदराबाद के इन नवयुवकों का यह पग—यह क्रान्तिकारी भावना महर्षि दयानन्द की उस शिक्षा का परिणाम था, जिन्होंने १८५७ की भारतीय क्रान्ति में परोक्ष रुप से नर्मदा तट पर घूमते हुए क्रान्तिकारियों को प्रोत्साहन दिया था।

आज़ाद हैदराबाद आन्दोलन

आज़ाद हैदराबाद का आन्दोलन अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुका था। हैदराबाद में मजलिस इत्तेहादुल मुसलमीन वही काम कर रही थी, जो "मुसलिम लीग" भारत में कर रही थी। अंग्रेजो साम्राज्य ने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए "फूट डालो और राज्य करो" के सिद्धान्त पर दो-राष्ट्र की भावना को देश में फैला रखा था। वह भावना देश के विभाजन के बाद भी समाप्त नहीं हुई थी। यह भावनो

मुसलमानों में फैली हुई थी। इसी भावना से प्रेरित हो कर इत्तेहादुल मुसलमीन ने "हम बादशाह हैं" की गर्वोक्ति के द्वारा राज्य की बहुसंख्यक हिन्दू जनता को आतंकित और प्रभावित करने का भरसक प्रयत्न किया। मुसलमानों के इस प्रान्तीय संगठन का तर्क यह था कि हैदराबाद एक इसलामी राज्य है। इसका बादशाह मुसलमान है और इसी मज़हबी रिश्ते के कारण मुसलमानों को सत्ता प्राप्त करने को अधिकार प्राप्त है। वह निज़ाम की व्यक्तिगत राज्यसत्ता को केवल मुसलमानों की सत्ता का प्रतिनिधि समझती थी। इस आन्दोलन को मात्र इसलिए चलाया जा रहा था कि दक्षिण में हैदराबाद पाकिस्तान के उद्देश्यों की पूर्ति कर सके। इसीलिए इस आन्दोलन को मुसलिम लीग का सहयोग और समर्थन प्राप्त था। वास्तविक स्थिति यह थी कि हैदराबाद में ८६ प्रतिशत हिन्दू प्रजा थी। इसके ठीक विपरीत कश्मीर में मुसलिम लीग का तर्क यह था कि वहाँ मुसलमानों की संख्या अधिक है। मात्र एक हिन्दू राजा होने से वह हिन्दू राज्य नहीं कहला सकता। ब्रिटिश राजनीति की दृष्टि से हैदराबाद में मुसलिम लीग आर्य समाज को अपना शत्रु समझती थी, जिसने उसका मुक़ाबला इसलामी तबलीग़ (धर्म परिवर्तन) से ले कर आज़ाद हैदराबाद आन्दोलन तक सख्ती से और डट कर किया। इसके बाद की घटनाओं की दूसरी क़िस्त अर्थात् 'पुरानी यादों की झलक" को राजनीतिक दृष्टिकोण से जनता की सेवा में प्रस्तुत करूँगा। पुरानी यादों को इस श्रृंखला में चार-पांच महत्त्वपूर्ण और रोचक घटनाओं का वर्णन करने के प्रश्चात् अपनी रामकहानी को विराम दूँगा।

हिन्दी आन्दोलन

पंजाब सरकार अकालियों के प्रभाव में थी। यद्यपि उस सरकार के मुख्यमंत्री प्रताप सिंह कैरों थे जो कांग्रेस पार्टी द्वारा नेता निर्वाचित हुए थे। अपने भीमसेन सच्चर के फार्मूले को जारी करके हिन्दी के साथ पंजाबी भाषा को गुरुमुखी लिपि में अनिवार्य घोषित किया। जबकि पहले के पंजाब में हिन्दुओं का बहुमत था। पंजाबी को अनिवार्य बना कर हिन्दी को द्वितीय भाषा का स्थान दे दिया गया था। हिन्दी माध्यम

के स्कूलों और कालेजों को पंजाबी माध्यम में परिवर्तित करने पर विवश किया जा रहा था। उस समय हिन्दी की रक्षा और हिन्दुओं के उचित अधिकारों की रक्षा के लिए आर्यसमाज को १९५७ में "हिन्दी आन्दोलन" श्री घनश्याम सिंह जी गुप्त के नेतृत्व में आरम्भ करना पड़ा था। इस आन्दोलन का संचालन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली ने किया था। सारे भारत वर्ष में तेईस हज़ार सत्याग्रहियों ने अपने आपको गिरफ़्तार करवाया था। प्रतापसिंह कैरों की अत्याचारी भ्रष्ट सरकार ने जो अत्याचार किये, उनके स्मरण मात्र से ही कलेजा काँप उठता है, और आँखों से आँसू निकल पड़ते हैं। श्री सुमेर सिंह जी फिरोजपुर जेल में शहीद कर दिये गये। सत्याग्रहियों पर अत्याचार के पहाड़ टूटते रहे। प्रथम सत्याग्रह के डिक्टेटर पूज्य स्वामी आत्मानन्दजी महाराज ने मुझको आज्ञा दी कि मैं देहली पहुँच कर सत्याग्रह के काम को कार्यवाहक अध्यक्ष के रुप में सम्भाल लूँ। स्वामी जी की आज्ञा का पालन करते हुए मैं दिल्ली पहुँच कर पाँच मास तक सत्याग्रह का सँचालन आदरणीय घनश्याम सिंह जी गुप्त के आदेशानुसार करता रहा।

हैदराबाद के आर्यों ने भी बहुत बड़ी संख्या में इस आन्दोलन में भाग लिया था। श्री मुन्ना लाल जी मिश्र, स्व० श्री दत्तात्रेय प्रसाद जी एडवोकेट, श्री शेषराव जी बाघमारे एडवोकेट, श्री नरदेव जी (परली) श्री ज्ञानेन्द्र जी शर्मा (औरंगाबाद), श्री हरीशचन्द्र गुरुजी (औराद गुंजाटी), श्रीमती प्रभावती देवी, श्रीमती कमला देवी और श्रीमती मंदालसा देवी (कल्याणी) के नाम उल्लेखनीय हैं। सत्याग्रह के बढ़ते हुए उत्साह और उसके प्रभाव का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि पंडित जवाहर लाल नेहरु प्रधान मंत्री भारत सरकार, मौलाना अबुलकलाम आज़ाद शिक्षा मन्त्री भारत सरकार और श्री गोविन्दवल्लभ पंत गृहमन्त्री भारत सरकार ने पंडित इन्द्र जी विद्यावाचस्पति और श्री घनश्याम सिंह जी गुप्त से सम्पर्क स्थापित किया। इन दोनों आर्य नेताओं के साथ मैं भी श्री गोविन्दवल्लभ पंत से मिलने उनके निवास स्थान पर गया था। दो घन्टे की लम्बी बातचीत के बाद उनके द्वारा विश्वास दिलाने पर कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

की माँगों को बहुत हद तक पंजाब सरकार से मनवा लिया जाएगा, आन्दोलन को स्थगित कर दिया गया। परन्तु खेद है कि श्री गोविन्द वल्लभ पंत जैसे राजनीतिक प्रताप सिंह कैरों की धमकी से प्रभावित हो कर वायदे से मुकर गये। सच्चर फ़ार्मूले के परिणाम स्वरुप छः हजार हिन्दी अध्यापकों को नौकरी से निकाल दिया गया, और पंजाबी शिक्षा अनिवार्य कर दी गयी। इस सत्याग्रह आन्दोलन को सफल बनाने वालों में लाला रामगोपाल शाल वाले, पं प्रकाशवीर शास्त्री, पंडित शिवकुमार जी शास्त्री, श्री रघुवीर सिंह जी, स्वामी ओमानन्द जी और श्री ओमप्रकाश जी पुरुषार्थी का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा।

हिन्दी आन्दोलन की उपलब्धि

इस सत्याग्रह ने अकालियों के हिन्दू विरोधी दृष्टिकोण से भयभीत हिन्दुओं में नवजीवन की चेतना उत्पन्न कर दी। हिन्दुओं में एक मंच पर एकत्रित हो कर अपनी माँगें मनवाने की भावना उत्पन्न कर दी। आर्यसमाज आगे बढ़ कर पंजाव के हिन्दुओं के अधिकारों की रक्षा के लिए अपना महान् बलिदान प्रस्तुत न करता तो पंजाब में अकालियों के हिन्दू-विरोधी दृष्टिकोण और व्यवहार ने हिन्दुओं को दूसरी श्रेणी का नागरिक बना कर रख दिया होता। हिन्दु आज सम्मान और गौरव के साथ पंजाब में अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं। आर्य समाज पंजाब में एक जीवित आन्दोलन के रुप में उनके जीवन का अंग बन गया है। अकाली सरकार हो या काँग्रेसी सरकार, आर्य समाज को छेड़ना शेर को छेड़ने के समान समझती है। इस आन्दोलन में मैंने दिन-रात एक करके जो कार्य किया था उससे आर्य जगत भली भाँती परिचित हैं। उन दिनों मैंने पंडित विनायक राव जी विद्यालंकार को पत्र लिखा था, उसका कुछ अंश इस प्रकार है-

"मैं आपके इस विचार से भी सहमत हूँ कि प्रजातन्त्रीय राज्य में सत्याग्रह का कोई आधार नहीं है। परन्तु सरकार को समझाने और उचित माँगों को स्वीकार कराने के समस्त वैधानिक उपायों के स्थगित हो जाने के पश्चात् कोई उचित निर्णय न मिले तो फिर क्या उपाय किया जा सकता है?

"मैं इस बात को कदापि मानने के लिए तैयार नहीं कि बहुमत सदा सत्य पर ही आरूढ़ रहता हैं। पार्टी की नीति को स्थिर रखने के लिए कभी-कभी बहुमत उलटी ओर भी जाता है, जा सकता है। और मैं यह भी नहीं मानता कि अल्पमत वाला दल सदा असत्य पर आरूढ़ रहता है यह बात मानी जाती रहेगी और उसकी माँग को न मानकर तिरस्कार कर दिया जाएगा। जब तक यह प्रणाली रहेगी तब तक सत्याग्रह की पद्धति को अपनाना ही पड़ेगा।"

"प्रजातन्त्र-प्रणाली में विरोधी दल तो आवश्यक होता है। जब शासन-चक्र ठीक न चले तो जनता को सतर्क रहने की आवश्यकता है। समय पड़ने पर अन्याय, अत्याचार के प्रतिरोध के लिए जनता को खड़ा होना ही चाहिए। जब तक यह प्रणाली हमारे चुनाव में रहेगी कि चुना हुआ व्यक्ति ऊपर जा कर पार्टी का पाबन्द तो हो जाता है पर जनता का पाबन्द नहीं रहता, तब जनता को अपने प्रतिनिधि द्वारा लोकसभा में या विधान सभा में उनसे काम नहीं लिया जा सकता क्योंकि वह पार्टी से बँधे हुए होते हैं तो जनता को स्वयं खड़ा रहने का प्रजातन्त्र में मौलिक अधिकार प्राप्त है।"

गो-रक्षा आन्दोलन

सन् १९६६ इस्वी में पुरी के जगद्गुरु शंकराचार्य के नेतृत्व में गोरक्षा आन्दोलन चलाया गया था। पाँच लाख हिन्दुओं का एक ऐतिहासिक जुलूस लोकसभा तक निकाला गया था। वहाँ पहुँच कर प्रधान मन्त्री गृहमन्त्री श्री गुलजारीलाल नन्दा को गोरक्षा नियम बनाने के लिए ध्यानाकर्षन के निमित्त ज्ञापन दिया। भारत सरकार ने अपनी शक्ति के द्वारा इस आन्दोलन को समाप्त करने का प्रयत्न आरम्भ कर दिया। सत्याग्रह आन्दोलन उभरता ही गया। हजारों आर्यसमाजियों ने सत्याग्रह में भाग लिया। हैदराबाद में पुरी के शंकराचार्य ने १९६८ ई० में गोरक्षा-सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए कहा था, "गोरक्षा आन्दोलन में आर्यसमाज ने अपना जो योगदान दिया है उसके लिए मैं आर्यसमाज

का जन्म भर आभारी रहूँगा।" इस आन्दोलन में २१ गोभक्त शहीद हुए। कांग्रेसी राज्य के अत्याचार, अनाचार, मारपीट के बावजूद भारत के कोने-कोने से लगातार जत्थे देहली पहुँच कर अपने-आप को गिरफ्तार कराते रहे। ऐसे अवसर पर चुप साध कर बैठना मेरी प्रकृति के विरुद्ध था। मैंने उस समय दिल्ली पहुँच कर ११२ सत्याग्रहियों के साथ चाँदनी चौंक दिल्ली में हजारों हिन्दुओं और आर्यों की उपस्थिति में सत्याग्रह किया। हम सबको तिहाड़ जेल पहुँचा दिया गया, जहाँ मजिस्ट्रेट ने एक-एक मास की सज़ा सुनाई। हैदराबाद से श्री मुन्नालाल मिश्र, श्री गोपालदेव शास्त्री, श्री सोंहनलाल वानप्रस्थी और श्री बंसी लाल जी के अतिरिक्त जालना, गुलबर्गा के आर्यसमाजियों ने इसमें बढ़-चढ़ के भाग लिया। था श्री करपात्री जी के त्रुटिपूर्ण नेतृत्व के कारण यह आन्दोलन सफलता के द्वार तक पहुँचने से पूर्व ही सरकार की कूटनीति का शिकार हो गया।

संयोजक के रूप में नियुक्ति

सन् १९६० में आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर-प्रदेश की ओर से दयानन्द दीक्षा-शताब्दी मथुरा में मानने का निर्णय किया गया और उसके सम्पूर्ण प्रबन्ध का उत्तरदायित्व मुझे स्वागताध्यक्ष के रुप में सौंपा गया। श्री ज्ञानेन्द्र शर्मा औरंगाबाद के साथ मथुरा पहुँच कर तीन मास तक समारोह की तैयारी की। भारत के प्रथम राष्ट्रपति अजातशत्रु बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी ने दयानन्द-दीक्षा-शताब्दी का उद्घाटन किया था। इस अवसर पर दो लाख आर्यसमाजियों का जमाव हुआ था। इस शताब्दी-समारोह के प्रबन्ध में शायद आर्य-जगत् को मेरे प्रबन्ध-सम्बन्धी कार्य पसन्द आये। अतः उस समय से सार्वदेशिक सभा की ओर से आयोजित सम्मेलनों के प्रबन्ध के लिए मुझे चुना जाने लगा। उदाहरण के लिए १९७२ में अलवर महासम्मेलन, १९७३ में मारिशस आर्य सम्मेलन और १९७५ में आर्य समाज शताब्दी समारोह दिल्ली का संयोजक नियुक्त किया गया।

एक दुर्घटना

तांडूर से चिंचोली को जाने वाली सड़क पर एक छोटा-सा गाँव कोतल्लापुर से नाम से बसा हुआ है। वहाँ एक देवी मन्दिर भी है, जिसकी यात्रा हर साल होती है। इस उत्सव में हज़ारों श्रद्धालु सम्मिलित होते हैं। इस मंदिर के चारों ओर पानी के पाँच-छह कुंड हैं। एक बार यात्रियों ने कुंड के पानी का प्रयोग किया जिसके फलस्वरुप एक हज़ार लोग मौत के शिकार हो गये। जाँच के बाद पता चला कि उस कुंड का पानी विषाक्त हैं। यह कहना कठिन है कि विषाक्त प्रभाव प्राकृतिक रुप से उत्पन्न हुआ अथवा किसी विरोधी संगठन की शरारत का परिणाम था। उस समय हैदराबाद राज्य में हिन्दू-मुसलिम तनाव चरम सीमा पर था। इस दुर्घटना की सूचना मिलते ही आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से मैं और स्वामी अभयानन्द जी तांडूर पहुँचे। आर्य समाज बम्बई और आर्य समाज गुलबर्गा के आर्य समाजी भी वहाँ पहुँच गये। हम सब एक मास तक सेवा सहायता शिविर में काम करते रहे। हज़ारों लोगों को जो उस विष से प्रभावित हुए थे बचाने के लिए टीके लगवाये गये। शवों का दाह संस्कार कराया गया। आर्य समाज की ओर से यह सेवा-कार्य न किया गया होता तो कदाचित् परिस्थिति और भी बिगड़ जाती। यह घटना ३० मई १९४१ की है।

तबलीग का अवरोध

मजलिसे-इत्तेहादुल-मुसलमीन के अध्यक्ष नवाब बहादुरयार जंग ने एक गुप्त गश्ती रियासत हैदराबाद के इत्तेहादुल मुसलमीन की सभी शाखाओं को जारी की थी कि हरिजनों को मुसलमान बनाया जाए, और प्रचार न किया जाए। यह सरक्यूलर (गश्ती) स्वर्गीय बी० वेंकट स्वामी जी के प्रयत्नों से प्राप्त हुआ था। इस बात की सूचना जब हैदराबाद के प्रसिद्ध नेता पंडित वामन नायक जी को मिली तो उन्होंने आर्य समाज के कर्ताधर्ता श्री चन्दूलाल जी से सम्पर्क स्थापित किया और मुसलमान बनने वाले हरिजनों की शुद्धि के कार्य को जारी रखने

का निश्चय किया गया। स्वर्गीय शंकर रेड्डी, श्री बलदेव पतंगे और कार्य मुझे यह कार्य सौंपा गया। मैंने मिरियालगुड़ा, सूर्यपेठ, देवरकदरा, देवरकोंडा, परकाल, वरंगल और बाबा साहबपेट स्थानों पर पहुँच कर दस हज़ार हरिजनों को जो मुसलमान बनाये गये थे शुद्ध करके फिर से हिन्दू धर्म में सम्मिलित कर लिया। इस शुद्धि-कार्य के मार्ग में जिन कठिनाईयों और बाधाओं का मुझे उस समय की परिस्थितियों में सामना करना पड़ा, उनकी आज कल्पना करता हूँ तो एक चमत्कार सा प्रतीत होता है। शुद्धि की सफलता को देख कर दारुलसलाम के वार्षिक समारोह में नवाब बहादुरयार जंग ने भाषण करते हुए कहा था कि एक छोटे से क़द के आदमी नरेन्द्र ने मेरे सारे काम पर पानी फेर दिया है, और आप लोग हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं। इस मजमे में कोई ऐसा आदमी नहीं जो.............इन शब्दों से उनके उद्देश्य का आप अनुमान लगा सकते हैं। ईश्वर की कृपा से मैं आज तक जीवित हूँ। आर्य समाज के अस्तित्व को धरती से मिटाने वाले उस्मान अली खाँ और उनके समर्थक नवाब बहादुर यार जंग इस दुनिया से चल बसे। उनका नामो-निशान तक नहीं बचा, परन्तु आर्य समाज की ओ३म् ध्वजा आकाश पर अपनी पूर्ण गरिमा के साथ लहरा रही है, और युगों-युगों तक लहराती रहेगी। आर्यसमाज फूल की सुगन्ध की तरह सारे संसार में व्याप्त हो गया है।

नज़रबन्दी में गवाही

हैदराबाद के "धूलपेठ के हिन्दू-मुसलिम दंगे" के सम्बन्ध में २१ आर्य समाजियों को गिरफ़्तार करके मुक़दमा चलाया गया था। इन अभियुक्तों में स्वर्गीय ठाकुर उमरावसिंह जी और पंडित सोहनलाल जी का नाम भी था। मुझे ठाकुर उमरावसिंह जी की ओर से बचाव पक्ष की ओर से साक्षी के रुप में हाईकोर्ट में उपस्थित होना था। परन्तु मेरे इस बयान के दिन से चार दिन पूर्व ही मुझे मनानूर में नज़रबन्द कर दिया गया था। इस पर प्रश्न उपस्थित हुआ कि नरेन्द्र की गवाही हाईकोर्ट में ली जाए या पूरी अदालत को मनानूर ले जाया जाए। निज़ाम सरकार ने निर्णय किया कि मुझे मनानूर से हैदराबाद की चंचलगुड़ा जेल में ला कर एक विशेष अदालत में बयान लिया जाए। मनानूर

की नज़रबन्दी के चौथे दिन मुझको श्री अशफाक़उल्ला मनानूर से सेण्ट्रल जेल ले आए और वहाँ ख़लीलउलज़माँ सिद्दीक़ी जज हाईकोर्ट और जूरी के सम्मुख मेरा बयान क़लमबन्द किया गया। जेल के चारों ओर पुलिस का ज़बरदस्त प्रबन्ध किया गया था कि कहीं हिन्दू जनता जेल पर हमला न कर दे।

खादी-भक्ति

आज से पैंतालीस वर्ष पूर्व की बात है। सन् १९३१ में पंडित जवाहरलाल नेरु श्रीलंका से लौटते समय हैदराबाद पधारे और भारत-कोलिका सरोजिनी नायुडू के निवास "गोल्डन थ्रोशोल्ड" में ठहरे थे। इस अवसर पर पंडित जी अपने करकमलों से रेज़ीडेन्सी (जिसको अब सुलतान बाजार कहा जाता है) में खादी भण्डार का उद्घाटन किया था। उस समय मान्यवर भाई राम कृष्ण जी धूत समाज-निर्माण के कार्यक्रमों में भाग ले रहे थे। खादी भण्डार को स्थापना उन्हीं के प्रयत्नों का परिणाम था।

मैं उनके कार्य से प्रभावित हो कर उनका हाथ बँटाने के उद्देशय से गाँधी जयन्ती के अवसर पर ठेलों पर खादो ले कर मुहल्ला-मुहल्ला और घर-घर जा कर खादी बेचा करता था। उस समय से मैंने गाँधी जी के राजनैतिक और रचनात्मक कार्यों में रुचि लेना आरम्भ कर दिया।

नवजीवन के अग्रदूत

रियासत हैदराबाद में काँग्रेस की स्थापना के सम्बन्ध में भी बड़ी कठिनाइयां उपस्थित कर दी गयी थी, जिसके कारण राजनैतिक चेतना हैदराबाद में नहीं के बराबर थी। धर्मवीर पंडित वामन नायक जी और न्यायमूर्ति केशवराव जज हाईकोर्ट विभिन्न शैक्षणिक, सांस्कृतिक और सामाजिक कार्यक्रमों के माध्यम से हैदराबाद में राजनैतिक चेतना उत्पन्न करने के प्रयत्न करते रहे। परन्तु उनके इन कार्यों में भी सरकार की ओर से बाधाएँ उपस्थित को जाती रहीं।

सन् १९३४ की बात है, जब महात्मा गाँधी जी हरिजन-सुधार के मिशन पर हैदराबाद पधारे थे। उसी दिन संध्या को विवेकवर्धिनी थिएटर के मैदान में लाखों के जनसमूह को सम्बोधित करते हुए हरिजन-सुधार सम्बन्धी अपने विचारों को उन्होने प्रकट किया था, जिनसे प्रभावित हो कर हम लोगों ने काचीगुड़ा में हरिजन हॉस्टल की स्थापना की थीं।

श्रीमान् वामननायक जी अध्यक्ष, रवि नारायण रेड्डी जी मंत्री, यरंम सत्यनारायण जो कोषाध्यक्ष और मैं कार्यकारिणी का सदस्य था। अगर यह कहा जाए तो उपयुक्त होगा कि मेरी सामाजिक कार्यों में अभिरुचि का आरम्भ इन दोनों संस्थाओं से सम्बद्ध होने के बाद आरम्भ होता है।

परिस्थितियो में परिवर्तन और निज़ाम की सख्त पालिसियों के कारण हैदराबाद के राजनैतिक नेताओं में जागृति की भावना उत्पन्न हुई, और सामाजिक आन्दोलनों के द्वारा जनता में राजनैतिक चेतना जागृत करने के उद्देश्य से प्रान्तीय शिक्षा सम्मेलन, हैदराबाद सोशल कॉफ्रेंस और पुस्तकालयों को स्थापना को गयी। इस सम्बन्ध में श्रीमान् राघवेन्द्रराव जी शर्मा एडवोकेट को राजनैतिक हलचल पैदा करने का अभियोग लगा कर शहर बदर कर दिया गया। आपने अकोला में श्रीमान् रामचन्द्र नाइक एम० ए० बार-एट-लॉ की अध्यक्षता में राजनैतिक सम्मेलन का आयोजन करके हैदराबाद सरकार के अत्याचार, अनाचार और हिंसात्मक प्रवृत्ति का कुछ इस ढंग से वर्णन किया था, जिससे ऐसा प्रतीत होता था कि राज्य की जनता किसी सख्त प्रतिक्रिया की तैयारी कर रही हो। पंडित केशवराव जी जज हाईकोर्ट पंडित वामन नाइक लक्ष्मणराव गानोजी, पंडित विनायकराव विद्यालंकार, चौधरी दिगम्बर राव जी एडवोकेट (औरंगाबाद) गोविन्द राव जी नानल, काशीनाथ राव जो एडवोकेट, माडपति हनुमन्त राव जो, बी० रामकिशन राव जी, एम० नरसिंह राव जो सम्पादक "रैयत", दिगम्बर राव जी बिन्दु आदि नेताओं का हैदराबाद की राजनीति में महत्वपूर्ण और प्रभावशालो स्थान था। हैदराबाद की जनता विपरोत परिस्थितियों में अपना जीवन बिता रही थी। ऐसे कठिन समय में उपर्युक्त महानुभावों

ने अपने जीवन को दाँव पर लगा कर जनता की सेवा की, जिसके कारण हैदराबाद में नवजीवन के लक्षण दिखाई देने लगे।

यहाँ एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक, क्रान्तिपूर्ण पग का वर्णन समीचीन होगा, वह यह कि सोशल कांफ्रेंस का समारोह प्रेम थिएटर में श्री शंकराचार्य जी कुर्तकोटी की अध्यक्षता में आयोजित किया गया था। स्वागत समिति के अध्यक्ष राजा प्रतापगिरजी थे। हैदराबाद में हरिजनों के प्रसिद्ध नेता श्री भाग्यरेड्डी, आदि हिन्दू सोशल सर्विस लीग के अध्यक्ष थे। आपने भी इस सम्मेलन में भाग लिया था। हरिजन-उद्धार के कार्यों में राय बालमुकुन्द राय साहब विशेष रुप से रुचि ले रहे थे। दोपहर में जब प्रेक्षकों का भोजन हो रहा था तो पंडित केशवराव कोरटकर और पं० विनायकराव जी विद्यालंकार ने श्री भाग्यरेड्डी को सार्वजनिक रुप से भोजन करने वालों की पंक्ति में ला कर बैठा दिया। बस फिर क्या था, रामचन्द्र राव जी गोलीगुड़ा, जिनका सम्बन्ध श्री सनातन धर्म सभा से था और वामन नायक जो ने ज़बरदस्त हंगामा खड़ा कर दिया। कई हिन्दू ब्राह्मण 'पंगत' में से उठ कर चले। परन्तु पं० विनायक राव जी और पं० केशवराव जी ने ज़बरदस्त विरोध के बावजूद श्री भाग्य रेड्डी जी को सबके साथ भाजन कराया। मैं उस समय एक स्वयंसेवक के रुप में श्रीमान् कृष्णा स्वामी मुदिराज के साथ कार्य करता था। वे स्वयंसेवक दल के कप्तान थे। हम सब कार्यकर्ता इस सहभोज में सम्मिलित हुए थे। इस साधारण घटना से सारे शहर के नवयुवकों में इस क्रान्तिपूर्ण पग के कारण जागृति और उत्साह का वातावरण उत्पन्न हो गया था। इसके बाद ही हम नवयुवकों ने निश्चय किया कि गांधी जयन्ती के अवसर पर गोलीगुड़ा राममन्दिर में हरिजनों के प्रवेश का अभियान आरम्भ कर देंगे। समाज-सुधार के क्षेत्र में हमारा यह पहला पग था। क़रीब ४५ वर्ष पूर्व की घटना है।

राजनैतिक संघर्ष

हैदराबाद राज्य की परिस्थितियाँ बड़ी तेज़ी से बदलने लगी। राजनैतिक कठोरता में उन्माद और दहशत व्याप्त हो चुकी थी। इसके

बावजूद हमारे नेताओं ने आंध्र महासभा की स्थापना के द्वारा तेलंगाने में कार्य आरम्भ किया, जिसमें माडपति हनुमन्तराव जी, वेंकटरेड्डी जी, जमलापुरम् केशवरावजी, बुरुगुल रामकृष्ण राव जी और सुरंवरम प्रताप रेड्डी जी भाग ले रहे थे। इसी दिशा में कर्नाटक और महाराष्ट्र सभा की भी स्थापना हुई। कर्नाटक सभा में जनार्दन राव जी देसाई, डॉ० जी एस० मेलकोटे और श्रीनिवास राव जी अखेलीकर तथा महाराष्ट्र सभा में स्वामी रामानन्द तीर्थ, काशीनाथ राव जी वैद्य, विनायक राव विद्यालंकार, गोविन्ददास जी शराफ़, वैशम्पायनजी बाबा साहब परांजपे एवं शेषरावजी वाघमारे कार्य कर रहे थे। इन सब महानुभावों ने जनता में आत्म गौरव और स्वतंत्रता की भावना जागृत की। निज़ाम की तानाशाही के विरुद्ध इन पथ-प्रदर्शकों के साथ एक जनसेवक के रुप में मैंने भी अपने आपको सम्बद्ध कर लिया था। स्वामी रामानन्द तीर्थ और दिगम्बरराव बिन्दु के प्रस्ताव पर मुझे आंध्र सभा (बी) का अध्यक्ष बनाया गया। यह क्षेत्र हैदराबाद सिकन्दराबाद और तिरुमल-गिरि पर आधारित था। इन क्षेत्रीय सम्मेलनों के परिणामस्वरुप 'स्टेट कांग्रेस' का जन्म हुआ। इसके सर्वप्रथम अध्यक्ष स्वामी रामानन्द तीर्थ चुने गये। स्वामी जी ने राष्ट्रीय संगठन और शैक्षणिक प्रगति की ओर विशेष ध्यान दिया। प्रजातांत्रिक और समाजवादी मूल्यों को सुदृढ़ बनाने में भाग लिया। स्वामी जी के निःस्वार्थ व्यक्तित्व और उनकी कार्यनिष्ठा से मैं बहुत प्रभावित हुआ। हैदराबाद राज्य की जनता के लिए उत्तरदायित्वपूर्ण सरकार के निमित्त आंदोलन के लिए कांग्रेस के कार्यक्रम के अनुसार मैंने पूरे राज्य का दौरा करके लोगों को राष्ट्रीय आंदोलन से परिचित कराया। सन् १९३८ में स्टेट कांग्रेस ने सत्याग्रह आरम्भ किया जिसमें गोविन्द राव नानल, रामकृष्णजी धूत, रावि नारायणजी रेड्डी और श्रीनिवास राव जी बोरेकर ने भाग लिया।

महात्मा गाँधी के निर्देश पर एक मास के बाद कांग्रेस सत्याग्रह स्थगित कर दिया गया। क्योंकि इसके साथ ही हिन्दू महासभा और आर्य समाज का सत्याग्रह भी आरम्भ हो गया था। आर्य समाज का सत्याग्रह भारतीय इतिहास में विशेष महत्व और स्थान रखता है, जिसमें कश्मीर से ले कर कन्याकुमारी तक के सरफ़रोश और जान

की बाजी लगाने वाले नवयुवकों के दल के दल हैदराबाद राज्य में मौत का सामना करने और जेलों के दरवाज़े खटखटाने दौड़े-दौड़े आ रहे थे। इस सत्याग्रह की भारत के घर-घर में चर्चा थी। भारत ही नहीं, बल्कि इंग्लैंड की पार्लियामेण्ट में इसकी गूँज सुनाई दी। हैदराबाद की कायापलट में आर्य समाज का बहुत बड़ा योगदान रहा है। भारत की स्वतन्त्रता के पश्चात् हैदराबाद पर "पुलिस एक्शन" का वर्णन करते हुए लौह पुरुष सरदार वल्लभभाई पटेल ने कहा था, "यदि आर्य समाज ने हैदराबाद में सत्याग्रह न किया होता तो हमें (भारत सर-कार को) तीन दिन में सफलता सम्भव न थी।"

स्टेट कांग्रेस पर दिसम्बर १६३८ में निज़ाम सरकार ने प्रतिबन्ध लगा दिया, तो उसके विरुद्ध स्वामी रामानन्द तीर्थ के नेतृत्व में व्यक्तिगत सत्याग्रह का निश्चय किया गया। स्वामी जी ने अपनी गिरफ़्तारी की स्थिति में मुझको दूसरे नम्बर पर नामज़द किया था, परन्तु यह सत्याग्रह गाँधी जी की और पंडित जवाहरलाल जी नेहरु के कहने पर स्थगित कर दिया गया। हैदराबाद सरकार और कांग्रेस के बीच राजनैतिक संघर्ष जारी रहा।

आज़ादी और आज़ादी

अगस्त १६४७ में भारत स्वतन्त्र हो गया और साथ ही पाकिस्तान अस्तित्व में आया तो निज़ाम ने दोनों से पृथक् रहने की घोषण कर दी। इस पृथक् राज्य की घोषणा ने सारे भारत और विशेष रुप से हैदराबाद राज्य में ज़बरदस्त खलबलो उत्पन्न कर दी।

निजाम की इस घोषणा के विरुद्ध मैंने राज्य के कोने-कोने में भ्रमण करके उसको हिटलरी मनोवृति का रहस्योद्घाटन करते हुए स्वामो रामानन्द तीर्थ के नेतृत्व में स्वतन्त्रता के लिए दीर्घकालीन संघर्ष के निमित्त तत्पर रहने की बात जनता से कही। मैं किसी भी स्थिति में निज़ाम की परम्परागत ख़ानदानी गद्दारो को सहन नहीं कर सकता था। स्वतन्त्र हैदराबाद राज्य की कल्पना वास्तव में एक और

पाकिस्तान बनाने की योजना थी। मैं हशमतगंज (सम्प्रति रामकृष्ण धूत गंज) सुलतानबाज़ार में 'आयंगर कमीशन' के विरुद्ध भाषण करके आर्यसमाज मंदिर लौट रहा था कि सुलतानबाज़ार के पुलिस इन्सपेक्टर ने मुझे गिरफ़्तार करके रातों-रात सेण्ट्रल जेल चंचलगुड़ा पहुँचा दिया। मेरी गिरफ़्तारी के कुछ दिनों बाद ही स्वामी रामानन्द तीर्थ, डाक्टर मेलकोटे और कृष्टाचारी जी जोशी एडवोकेट ने सुलतान—बाजार में राष्ट्रीय ध्वज फहराते हुए अपने आपको गिरफ़्तारी के लिए प्रस्तुत कर दिया। इन तीनों लीडरों को गिरफ़्तार करके उसी स्थान पर लाया गया, जहाँ मुझे रखा गया था। देखते ही देखते सेण्ट्रल जेल ने एक छोटी-सी बस्ती का रुप धारण कर लिया। सत्याग्रह की समाप्ति तक बी० रामकृष्णराव जी, काशीनाथरावजी वैद्य, विनायकराव जी विद्यालंकार, हरिश्चन्द्र हेडा, वेंकट रंगारेड्डी जी, रामकृष्ण जी धूत, चेन्नारेड्डी जी, दत्तात्रेयप्रसाद जी, महादेवसिंह जी, एस० वेंकटस्वामी जी, बी० वेंकटस्वामी जी कालीचरण जी 'प्रकाश', बिरधीचन्द जी चौधरी गंगाराम जी, गणपतराव जी वैद्य, सेण्ट्रल जेल पहुँच चुके थे। जेल-जीवन के वे दिन बहुत रोचक रहे हैं। इन सब साथियों के जीवन के सदाचार और उच्च विचारों से महीनों लाभान्वित होने का स्वर्णिम अवसर मिलता रहा।

"पुलिस एक्शन" के पश्चात् निज़ाम सरकार ने हम तीनों—स्वामी रामानन्द तीर्थ, पंडित विनायकराव विद्यालंकार और मुझे सेण्ट्रल जेल हैदराबाद से रिहा कर दिया। उसका कारण यह था कि क़ासिम रज़वी और उनके रज़ाकारों ने सत्ता की हवस में साम्प्रदायिकता की आग को सम्पूर्ण राज्य में फैला रखा था। नौबत यहाँ तक पहुँच चुकी थी कि स्वय निज़ाम जो मुसलमानों की सत्ता के प्रतीक समझे जाते थे, नाम-मात्र की स्वतन्त्रता के अपने जाल में फँस कर बेबस हो चुके थे। शहर की बिगड़ी हुई परिस्थिति को नियंत्रण में लाने और राज्य में शान्ति स्थापना के निमित्त हमें रिहा किया गया था। मैं एक साल चार महीने बाद छूटा था। वैसे मेरे जीवन के पाँच छः साल लगातार जेल यात्रा में बीते। स्वतन्त्र भारत के हैदराबाद में पग धरते ही मेरा उत्तरदयित्व बढ़ गया। पहला कार्य हमें राज्य में शान्ति स्थापित करना था। स्वामी रामानन्द तीर्थ अध्यक्ष स्टेट कांग्रेस ने "अमन कमेटी" क़ायम कर दी।

उसके अध्यक्ष डॉक्टर मेलकोटे थे। मैं सेक्रेटरी बनाया गया। श्री बाकर अली मिर्ज़ा भी मेरे साथ सक्रेटरी के रुप में कार्य करते रहे।

शहर हैदराबाद में पूर्ण शान्ति बनाये रखने और प्रतिक्रिया-स्वरुप किसी प्रकार के दंगे न होने देने का भारी उत्तरदायित्व था शान्ति के लिए दिन-रात मैंने प्रयत्न किया। मुसलमानों के मन-मस्तिष्क पर निराशा और शिथिलता का छा जाना स्वाभाविक था, जिसे दूर करने के लिए सरकार ने भी अमन-कमेटी के साथ हाथ बँटाया। मुसलमानों के नेताओं से व्यक्तिगत रुप से मिल कर परिस्थितियों को सुधारने की बातचीत की गयी। अमन-कमेटी को इस कार्य में सफलता प्राप्त हुई। स्टेट कांग्रेस के अध्यक्ष स्वामी रामानन्द तीर्थ ने अपने पत्र के द्वारा इन कार्यों की सराहना करते हुए लिखा था, "आपने और डाक्टर मेलकोटे ने शहर हैदराबाद में किसी भी अप्रिय घटना की रोकथाम के लिए जो भरसक प्रयत्न किया है और जिसके कारण मुसलमानों के मन में सन्तोष उत्पन्न हुआ है, इस सफलता पर आप दोनों को काँग्रेस की ओर से हार्दिक बधाई देता हूँ।"

राजनीति और घुटन

हैदराबाद स्टेट कांग्रेस का मैं उसकी स्थापना से ही सदस्य था। कार्यकारिणी समिति का पाँच वर्ष तक सदस्य निर्वाचित होता रहा। उसके साथ ही हैदराबाद नगर काँग्रेस का चार वर्षों तक सदस्य रहा। १९५१ में, मेरी अध्यक्षता के काल में नगर निगम के चुनाव सम्पन्न हुए और कांग्रेस के साठ सदस्य हैदराबाद नगर निगम के इतिहास में पहली बार निर्विरोध निर्वाचित हुए। १९५२ में राज्य विधान सभा के पहले आम चुनाव में शहर हैदराबाद से कांग्रेसी सदस्यों ने शानदार सफलता प्राप्त की। इन विधायकों में मैं भी एक थो।

सन् १९५३ में जब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का अधिवेशन पंडित जवाहरलाल नेहरु की अध्यक्षता में नानलनगर हैदराबाद में हुआ, तो मैं उसका स्वागत मन्त्री बनाया गया। आल इंडिया कांग्रेस कमेटी का दो

साल तक सदस्य रहा और पाँच वर्ष तक एम० एल० ए० रहा। मेरे सक्रिय राजनैतिक जीवन की यह अंतिम यात्रा थी।

कांग्रेस के राष्ट्रीय संगठन को सुदृढ़ बनाने और अपने कर्तव्य को निष्ठा और ईमानदारी के साथ निभाने का मैंने भरसक प्रयत्न किया, परन्तु राजनीति की इस यात्रा में आगे चल कर देखने में आया कि कर्तव्य, त्याग और बलिदान की भावना समाप्त हो कर स्वार्थ और सत्ता की हवस की प्रवृत्ति तीव्रता से बढ़ती जा रही है, और यह भी देखा कि—

चिराग़ों पर ही कुछ नहीं मौक़ूफ़
आदमी आदमी से जलते हैं।

इस वातावरण में घुटन—सी अनुभव होने लगी, क्योंकि मुझ जैसी प्रकृति और स्वभाव वाले के लिए यहाँ कोई स्थान न था। मैंने चुपचाप कांग्रेस से अलग हो जाना ही उचित समझा।

चक्रवर्ती राजगोपालचारी ने ठीक ही कहा था—"कांग्रेस स्वतंत्रता सेनानियों का एक पवित्र संगठन था और अब स्वार्थियों, अवसर -लोलुपों का टोला (दल) बन गया है।"

राजनीति से लौटा

आर्यसमाज के पवित्र आदर्शों के प्रचार के लिए मैंने अपना जीवन समर्पित कर दिया है और उनके प्रसार कार्यों में निरन्तर लगा हुआ हूँ। आर्यसमाज ने मनुष्य के निर्माण और मानवता के सँवारने में बहुत बड़ा योग दिया है।

मेरे जीवन का उद्देश्य प्रारम्भ से ही जनता की सेवा रहा है। मैं भरसक सेवा कार्य करता आ रहा हूँ। जनता ही देश के लिए जान लड़ाती, बलिदान देती है, और इतिहास बनाती है। मुझे सदा उसके साथ चलतेहुए गौरव अनुभव होता है।

हिन्दी मेरी मातृभाषा है, और उससे मेरा प्रेम और लगन स्वाभाविक है, परन्तु हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने का भारत सरकार ने जो निर्णय किया तो उसके सन्मुख यह वास्तविकता थी कि हिन्दी सारे देश में साधारणतः बोली और समझी जाती है। वैदिक भाषा संस्कृत से उसका नाता जुड़ा हुआ है, जिसने भारतीय सभ्यता और संस्कृति को अपने साहित्य से समृद्ध कियाहै। देश की अधिकतर भाषाओं पर संस्कृत का ही मूलभूत प्रभाव है। देवनागरी लिपी अपने आपमें पूर्ण और वैज्ञानिक हैं। इसी राष्ट्रीय दृष्टिकोण को सन्मुख रखते हुए राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार-प्रसार के कार्यों में मैं यथाशक्ति भाग लेता रहा हूँ।

हैदराबाद में हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना से ही मुझे उसका सदस्य रहने का आनन्द प्राप्त हुआ है। सन् १९४९ में "सभा" के निमंत्रण पर अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन हैदराबाद में लोकप्रिय हिन्दी साहित्यकार श्री चन्द्रबली पाण्डेय की अध्यक्षता में हुआ तो मैं राष्ट्रभाषा परिषद् की स्वागत समिति का अध्यक्ष बनाया गया था। मैं चार वर्षों तक हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद का अध्यक्ष भी रहा हूँ। सन् १९६३ में हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद का अध्यक्ष चुना गया और १९६६ के "सभा" का रजत जयन्ती समारोह मेरी अध्यक्षता काल में ही सम्पन्न हुआ।

सन् १९६८ में आंध्रप्रदेश हिन्दी सम्मेलन के स्वागत मंत्री का उत्तरदायित्व भी मुझे सौंपा गया था। हिन्दी जगत के वरिष्ठ और लोकप्रिय नेता सेठ गोविन्ददास जी ने इस सम्मेलन की अध्यक्षता की थी। मद्रास सरकार के हिन्दी व्यवहार के विरुद्ध शहर हैदराबाद में जबरदस्त अभियान आरम्भ किया और जनता से हिन्दी में ही अपना काम काज करने की प्रार्थना इस सम्मेलन के माध्यम से की गयी।

जनसेवा और समाजसेवा का मेरा यह क्रम 'जगदीश सभा' से आरम्भ हुआ था, जिसे मैंने अपनी बस्ती शाहअली बंडा में स्थापित किया था। इसके साथ ही पुस्तकालय और वाचनालय भी था। यह वही काल था जब आंध्र महासभा के माध्यम से माड़पति हनुमन्तराव जी का 'पुस्तकालय अभियान' चल रहा था। मुझे 'नवयुवक संघ' की

स्थापना करने और देश के नवयुवकों की सेवा करने का भी गौरव प्राप्त हुआ।

मेरे जीवन में कुछ ऐसे ही क्षण आये हैं कि अपनी कार्य-पद्धति, स्वभाव एवं प्रवृत्ति के कारण कुछ प्रसिद्ध व्यक्तियों से भी मुझको टक्कर लेने पर विवश होना पड़ा था। सम्भव है कि मेरे ये निर्णय मेरी नासमझी और जवानी की दीवानगी के कारण हो, या उस कार्य-प्रद्धति को दूसरे पसन्द और स्वीकार न करने के कारण इस प्रकार की परिस्थितियाँ स्वतः उत्पन्न हो गयी हों। समाज-सेवक को कर्मक्षेत्र में दुर्गम घाटियों और गहरी नदियों को पार करना ही पड़ता है।

मैं इस बात को मानने वालों में हूँ कि जब कोई व्यक्ति किसी उत्तरदायित्व को सम्भाल लेता है तो वह अपनी सोच-समझ और चिन्तन के आधार पर पुरोगम बनाता और उसे यत्नपूर्वक सफल बनाने का प्रयास करता है। सम्भव है कि यह पद्धति सर्वग्राह्य न हो और त्रुटिपूर्ण हो। परन्तु जब उसके साथी उसके मार्ग में रुकावट डालते और काम की धारा को मोड़ देते हैं, जिसके कारण उसका मूल उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है तो ऐसी अवस्था में भावना पर नियन्त्रण पाना असाधारण, व्यक्तित्व का ही काम है। मुझ जैसे एक साधारण, अल्पबुद्धि और उपाधि-रहित व्यक्ति के लिए भावनाओं पर नियन्त्रण पाना असम्भव था। इसी भावना की प्रबलता का ही कारण हो सकता है कि बहुत से आर्य समाज के श्रेष्ठ, आदर के योग्य, बलिदानी व्यक्तित्वों का सामना करना भी सम्भव हो गया हो। किन्तु इसका कभी यह अर्थ नहीं कि उनके प्रति मेरे मन में किसी प्रकार की दुर्भावना और अनादर रहा है। इसके विपरीत मैं सदैव उनकी कार्य-क्षमता और योग्यता का लोहा मानता रहा हूँ। आज भी जब कि वे इस संसार में नहीं हैं और जो हैं, मेरी दृष्टि में उनकी निःस्वार्थ सेवाएँ और अपूर्व त्याग मेरे जीवन का आदर्श बने हुए हैं।

अब जब कि मैं नयी जीवन-यात्रा के पथ का पथिक बनने जा रहा हूँ जहाँ कि विविध वृत्तियों से पूर्णतः मुक्त और निवृत्त हो कर हृदय को पवित्र करना होता है उस स्थिति को प्राप्त कर मैं पुनः कभी

इस जीवन में इन्हें न उभरने दूँ। अपने कर्तव्य की पूर्ति में मुझसे किसी को कुछ क्षोभ और क्षति हुई हो तो उसके प्रति मैं अत्यन्त क्षमावनत हूँ।

पचास वर्ष होते हैं। अपनी व्यस्तताओं की भीड़ में इतना समय नहीं मिल सका, और न मैंने कभी ध्यान दिया कि डायरी में प्रति दिन की घटनाओं का विवरण नोट करूँ। इसलिए जहाँ तक स्मरण-शक्ति ने काम किया, स्मृतियों को कुरेद-कुरेद कर अपने जीवन की धूप-छाँव की कुछ झलकियाँ यहाँ प्रस्तुत कर रहा हूँ।

अगलों को ज़माना क्या देगा
अपनी तो कहानी ख़तम हुई।

ओ३म् शम्

★ ✲ ★

पंडित नरेन्द्रजी : जीवन झांकी

१० अप्रैल, १९०७ (श्रीरामनवमी) जन्म।

पिता का नाम : राय केशवप्रसाद सक्सेना

माता का नाम : गुणवंती देवी

१९३० : दयानन्द उपदेशक विद्यालय, लाहौर में प्रवेश।

१९३१ : स्वदेशी आंदोलन तथा आर्य समाज के कार्यों में भाग लेना आरंभ।

१९३२ : सामाजिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक कार्य, आदिवासी एवं हरिजनोद्धार।

१९३४ : 'वैदिक आदर्श' के सम्पादक।

१९३६ : आर्य समाज का नेतृत्व।

१९३८ : सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लेने के कारण राजनैतिक बन्दी के रुप में ३ वर्ष की 'काला-पानी' की सजा। हैदराबाद राज्य के अंदमान मन्नानूर जि० महबूब नगर में रखे गये।

१९४० : आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण के मंत्री निर्वाचित।

१९४४ : सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के उप-प्रधान व इंटरनेशनल आर्यन लीग के उपाध्यक्ष बने।

१३४५ : निज़ाम राज्य के द्रोही ठहराये गये। भाषण पर पूर्णतः प्रतिबंधित, एक वर्ष का कारावास।

१९४६ : हैदराबाद स्टेट कांग्रेस के मन्त्री निर्वाचित।

१९४७ : हैदराबाद सेंट्रल जेल में स्वामी रामानन्द तीर्थ आदि नेताओं के साथ बन्दी।

१९४८ : हैदराबाद—मुक्ति के बाद जेल रिहा

१९४९ : हिन्दू मुसलमान साम्प्रदायिक एकता के कार्यों में व्यस्त। राज्य कांग्रेस कमिटि के सदस्य। आन्ध्र बी प्राविंशियल कमिटि के

अध्यक्ष। अ० भा० हिन्दी साहित्य सम्मेलन के हैदराबाद अधिवेशन में राष्ट्रभाषा परिषद के स्वागताध्यक्ष।

१९५० : आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण के प्रधान निर्वाचित। हैदराबाद जिला कांग्रेस कमिटि के अध्यक्ष। गुमास्ता संघ के अध्यक्ष।

१९५२ : हैदराबाद राज्य विधान सभा के सदस्य निर्वाचित।

१९५३ : अ० भा० कांग्रेस कमिटि के नानलनगर, हैदराबाद अधिवेशन के स्वागत मन्त्री।

१९५४ : अष्टम आर्य महासम्मेलन, हैदराबाद के प्रमुख आयोजक।

१९५६ : दक्षिण में हिन्दी की प्रथम संस्था प्राच्य महाविद्यालय के संस्थापक तथा उसके अध्यक्ष।

१९५७ : हिन्दी रक्षा आन्दोलन पंजाब के संचालक।

१९५९ : स्वामी विरजानन्द जन्म शताब्दी मथुरा के संयोजक।

१९६३ : खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड के मेंबर सेक्रेटरी नियुक्त।

१९६५ : हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद के अध्यक्ष निर्वाचित।

१९६६ : हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद की रजतजयन्ती समारोह के स्वागताध्यक्ष, गोरक्षा आन्दोलन दिल्ली-सत्याग्रह में कारावास।

१९६७ : आन्ध्र प्रदेश हिन्दी सम्मेलन के स्वागत मन्त्री।

१९६८ : स्वागताध्यक्ष अष्टम आर्य महासम्मेलन हैदराबाद।

१९७१ : आर्य समाज स्थापना शताब्दी समारोह समिति के संयोजक मनोनीत।

१९७३ : आर्य महासम्मेलन को सफल बनाने मारीशस में प्रचार कार्य।

१९७५ : आर्य समाज स्थापना शताब्दी समारोह दिल्ली के सफल संयोजक।

१९७६ : स्वामी सत्यप्रकाशजी द्वारा संन्यास-दीक्षा तथा स्वामी सोमानन्द सरस्वती के नाम से विख्यात।

२४ सितम्बर १९७६ (अश्विन शुक्ल प्रतिपदा) निधन।

"संक्षिप्त सचित्र जीवन झाँकी"

पं० नरेन्द्रजी के पूज्य पिताजी श्री केशवप्रसादजी सक्सेना।

पं० नरेन्द्र जी अपने भाई श्री गुरुचरणदासजी-पत्रकार के साथ

हैदराबाद के आर्य नेता पं० विनायकराव जी के साथ पं० नरेन्द्रजी।
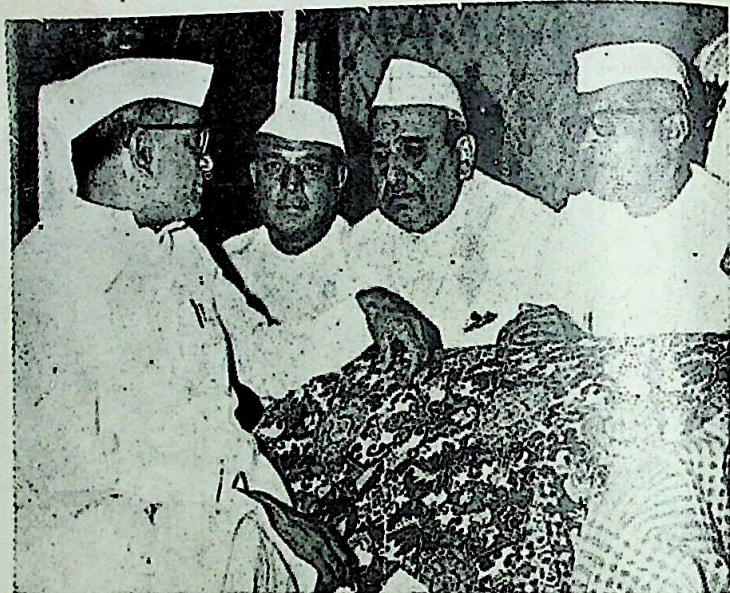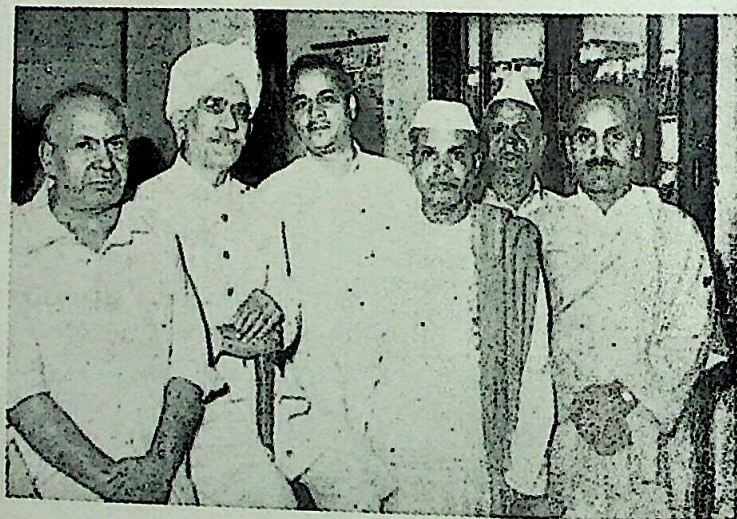
भारत के प्रथम राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसादजी का हैदराबाद में
भव्य स्वागत करते हुए पं० नरेन्द्रजी ।

स्वर्ण जयन्ती समारोह के अवसर पर संसद सदस्य
पं० प्रकाशवीरजी शास्त्री पं० नरेन्द्रजी
का स्वागत करते हुए ।
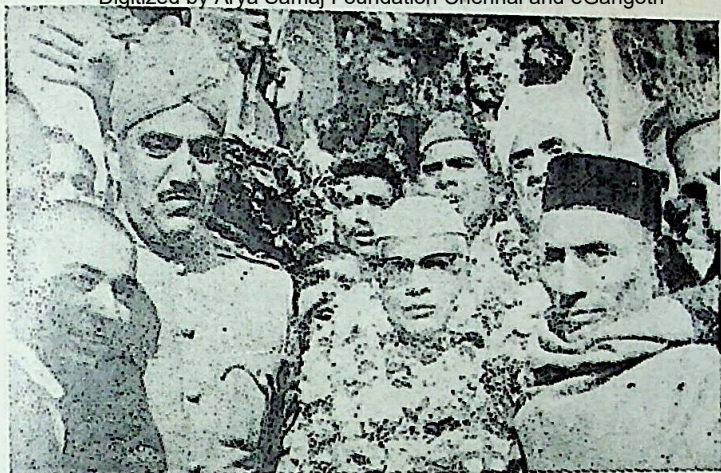
पंजाब में हिन्दी सत्याग्रह के अवसर पर पं० नरेन्द्रजी गिरफ्तारी से पूर्व। पास में खड़े हैं ला० रामगोपालजी शालवाले।

१९६८ में दशम आर्य महासम्मेलन के अध्यक्ष महात्मा आनन्द स्वामीजी का स्वागत करते हुए पं० नरेन्द्रजी।
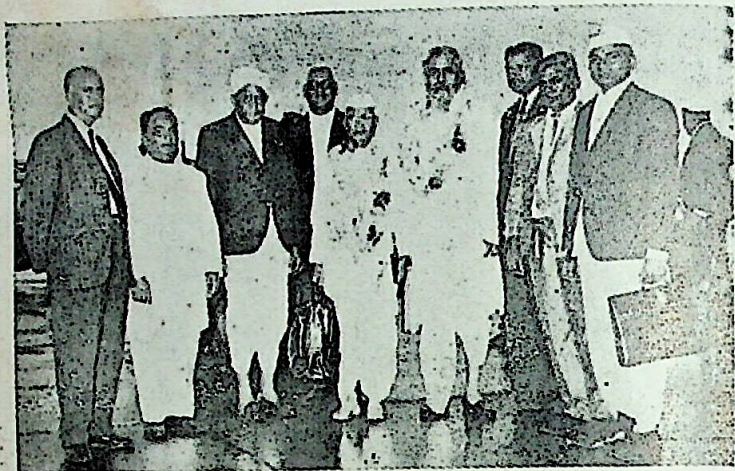
मौरिशस में आर्य सम्मेलन के प्रबन्धकर्त्ता के रुप में पहुँचने पर गणमान्य व्यक्तियों द्वारा पं० नरेन्द्रजी व आचार्य कृष्णजी का स्वागत ।
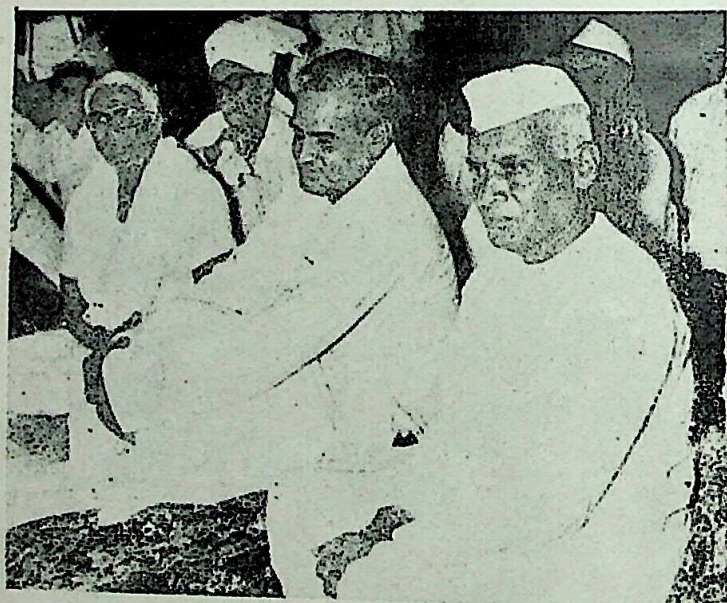
लोहपुरुष पं० नरेन्द्रजी नामक ग्रन्थ-समर्पण के अवसर पर श्री अटलबिहारी वाजपेयी के साथ ।

मौरिशस के राजदूत का स्वागत करते हुए पं० नरेन्द्र जी साथ में श्री ओम्प्रकाशजी त्यागी बैठे हैं
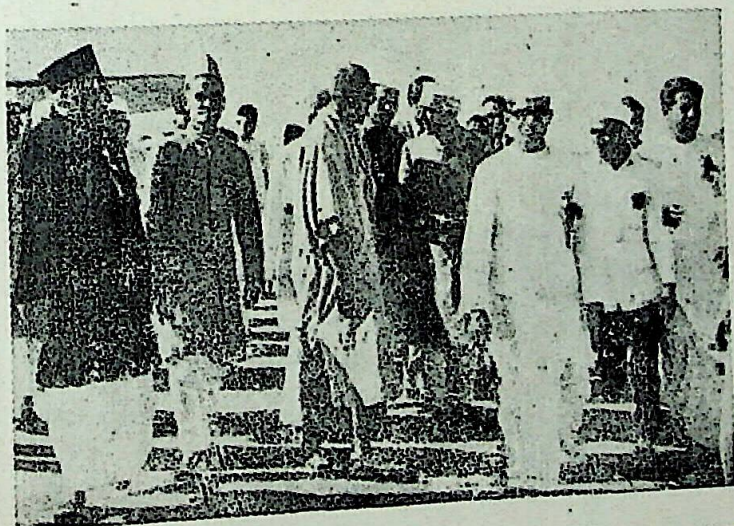
नानलनगर (हैदराबाद) अधिवेशन में कांग्रेसाध्यक्ष पं० नेहरु का स्वागत करते हुए पं० नरेन्द्रजी स्वामी रामानन्द तीर्थ आदि के साथ।
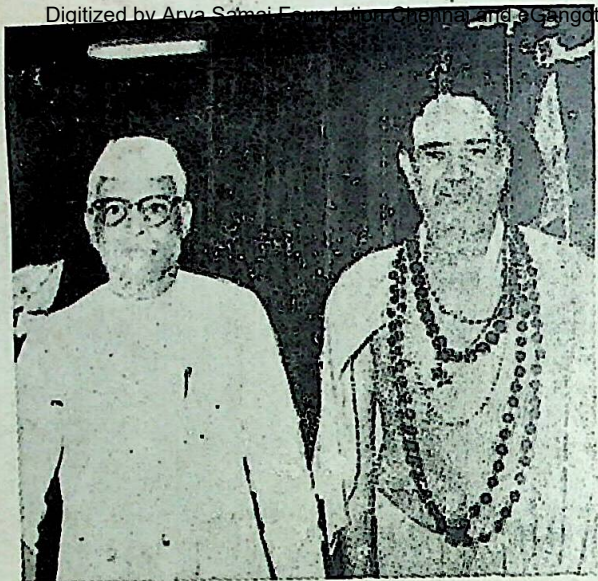
जगत् गुरु शंकराचार्य जो पुरी मठ स्वामो निरंजनदेवजी के साथ प० नरेन्द्रजी ।
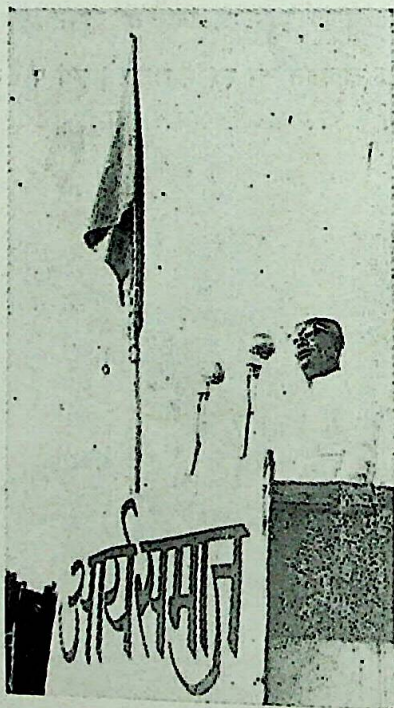
आर्य समाज के उत्सव पर भाषण देने की एक मुद्रा

हैदराबाद के लौह पुरुष पं० नरेन्द्रजी

संन्यास दीक्षा के बाद स्वामी सत्यप्रकाशजी स्वामी सोमानन्दजी (पं० नरेन्द्रजी) को आर्शीवाद देते हुए।
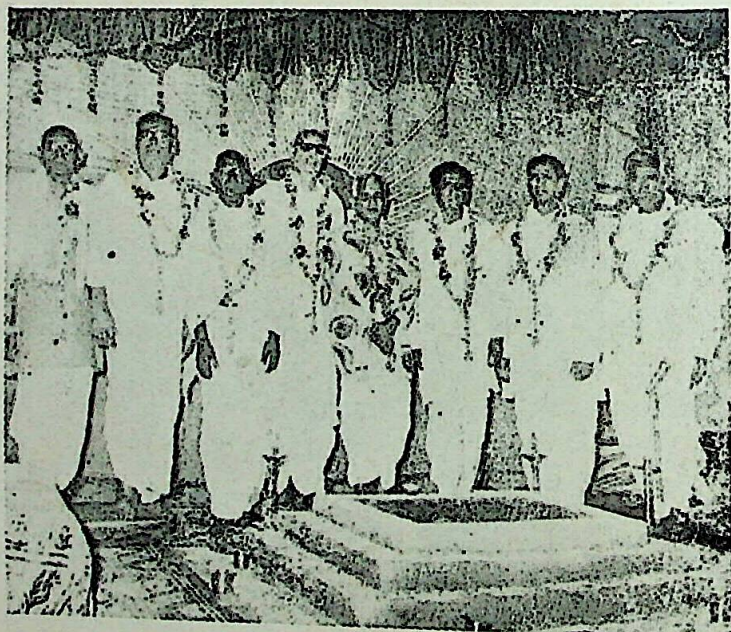
संन्यास दोक्षा पूर्व यक्ष के ब्रह्मा एवं ऋत्विज।
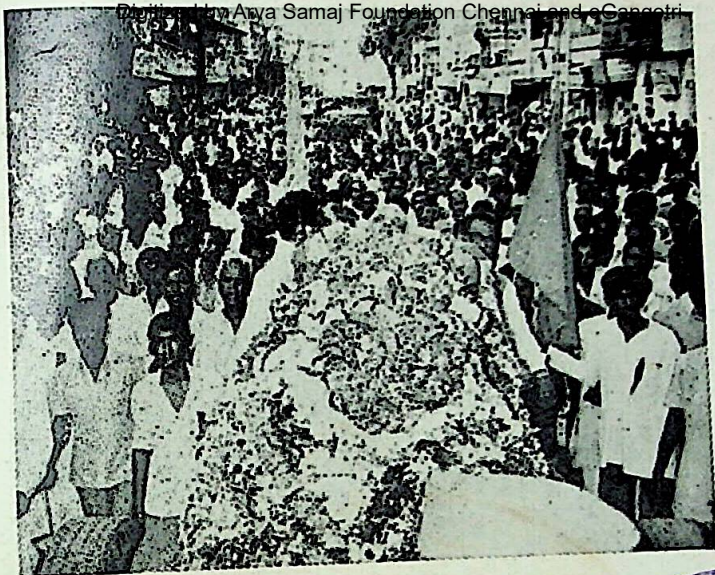
स्वामी सोमानन्द जी की शव यात्रा में विशाल
जन समूह का एक दृश्य
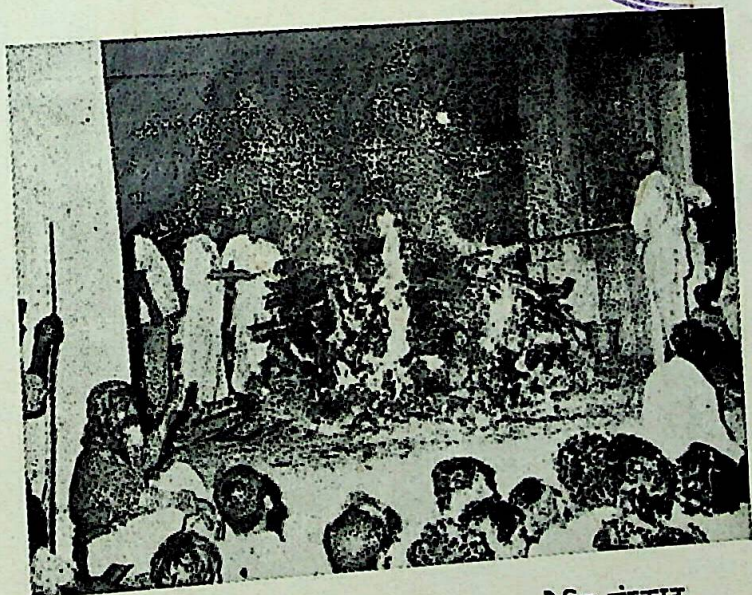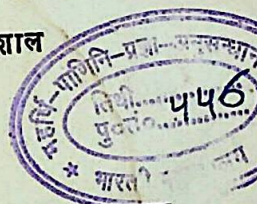
स्वामी सोमानन्दजी का वैदिक रीत्या अन्त्येष्ठि संस्कार
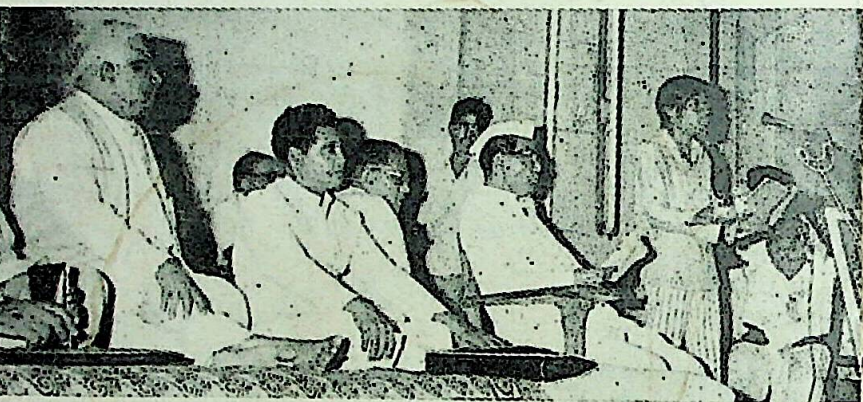
स्वामी सोमानन्द जी को अन्तिम श्रद्धाञ्जली देता हुआ एक नवयुवक
साथ में आन्ध्र प्रदेश के मुख्य मन्त्री श्री अंजैयाजी जो
व श्री विजयवर्गीय बैठे हैं।

दान दाताओं की सूचि

स्त्री आर्य समाज माडल टाऊन पानीपत	२००/रु०	ईतहाल मोटर स्ट्रान्सपोर्ट क०	५१ ,,
श्री सीताराम जी बजाज	१०१/-	श्री मेघराजजी आर्य	३१ ,,
" उलन मिल पानीपत	१०१	श्री किशनचन्द्र आर्य	२५ ,,
श्रीमती विद्यावती महाजन	१००	श्री आर्य समाज पिपरी	२५ ,,
चौ० जेसारामजो	१००	श्री रामरंगजी दुवा	२५ ,,
सत्याइ जिनिरिंग कारपोरेशन	१०१	चौ० मुन्शीराम जी	२५ ,,
श्रीमती गार्गी विविंग मिल	१०१	डा० रामलालजी	२५ ,,
श्री वेदपालजी आर्य	१००	श्रो मनोहररावजी हिबारे	२१ ,,
श्री रामस्नेहीजी	१००	श्रीमति करतार देवी	२१ ,,
श्रो ओम्प्रकाशजी गुप्ता	१०१	श्री सूर्यप्रकाशजी	२१ ,,
श्री बलदेवराजजी भाटिया	१००	श्री सत्यदेवजी भण्डारी	२१ ,,
श्री स्वतंत्रभारत उलन मिल्स	१०१	श्री प्रेमकुमारचन्द्रजी	२१ ,,
श्री ओम्प्रकाश जो गोयल	१०१	श्रीमति साविन्त्रिदेवीजो गुगलानो	२१ ,,
श्री विष्णुजो गोयल	१०१	श्री चमनलालजो ग्रोवर	२१ ,,
स्व० दीनानाथजी नागपाल	१०१	श्री डा० नारोयणदत्त जी	२१ ,,
श्री तुलसीदास जी खेड़ा	५० रु०	श्रीमती सुशीलादेवी मनुजा	२१ ,,
श्री डा० राजेशजी	५१ ,,	श्री सुरजीत आर्य	२१ ,,
श्री एम आर० दत्ता जो	५० ,,	श्री देवदत्तजी कुकरेजा	२१ ,,
श्रीमती आनन्द कुमारी	५१ ,,	श्री जगदीशजी लिखा	२१ ,,
श्री धनप्रकाशजी गुप्ता	५१ ,,	श्री विनोद कुमार लिखा	२१ ,,
श्री जगदीश्चन्द्रजी धवन	५० ,,	राजकुमार त्रिखा	२१ ,,
श्री ला० जगन्नाथजी आर्य	५१ ,,	दीपक मखीजा	२१ ,,

पुस्तक प्राप्ति स्थान

१ पं० प्रियदत्त शास्त्री

आर्य समाज माडल टाऊन, पानीपत

२ पं० गंगा प्रसाद

उपाध्याय प्रकाशन मन्दिर अबोहर

(ए० सी० प्रिंटर्ज रेलवे रोड, पानीपत, फोन ३७२२)

से मुद्रित